प्रकाशकीय

अब इसमें जरा भी संदेह नहीं कि यूपीए सरकार ने मात्र अपना राजनैतिक स्वार्थ सिद्ध करने के लिए पहले लिब्राहन आयोग की रिपोर्ट को लीक किया और फिर इसे संसद के पटल पर रखा। उद्देश्य एकदम साफ है। रोजमर्रा की आवश्यक वस्तुओं की बढ़ती जा रही कीमतों, किसानों में फैलती जा रही बेचैनी, चीन और पाकिस्तान की तरफ से आते जा रहे खतरों, पानी और बिजली की दरों में बढ़ोतरी जैसी समस्याओं से लोगों की कठिनाइयां बढ़ती जा रही थीं, उस तरफ से सरकार लोगों का ध्यान हटाना चाहती थी।

आखिर में रिपोर्ट नितांत निष्फल सिद्ध होकर रह गई है, जिस पर इतना लम्बा समय बर्बाद किया गया और आम आदमी की मेहनत की कमाई बट्टे खाते चली गई। इसमें सच को छोड़कर आपको सब कुछ मिल जाएगा।

हमने इस पुस्तिका के द्वारा अपने पाठकों को रिपोर्ट की वास्तविकता से अवगत कराने का प्रयास किया है। हमें आशा है कि हमारे पाठक इस रिपोर्ट को पढ़कर समझ पाएंगे कि आयोग की सच की तह तक पहुंचने की चाह नहीं थी और सरकार की भी क्या मंशा थी?

हम ''लिब्राहन आयोग जांच रिपोर्ट पर विश्लेषण'' अध्याय का प्रकाशन विश्व हिन्दू परिषद के सौजन्य से कर रहे हैं, जिसका संकलन श्री चम्पतरायजी, संयुक्त सचिव विश्व हिन्दू परिषद ने श्री अम्बा चरण वरिष्ठ (कमल संदेश), श्री के.के. शर्मा (कमल संदेश), श्री विनोद बंसल और श्री राकेश उपाध्याय के सहयोग से तैयार किया है।

इस पुस्तिका के संयोजन एवं प्रकाशन में 'कमल संदेश' पत्रिका के सम्पादक मंडल सदस्यगण सर्वश्री सत्यपाल, संजीव सिन्हा, शिवशक्ति, राम प्रसाद त्रिपाठी, विकास आनंद एवं कला-सज्जा में धर्मेन्द्र कौशल का भरपूर सहयोग रहा, जिसके लिए हम उनके आभारी हैं।

प्रकाशक
भारतीय जनता पार्टी
11, अशोक रोड, नई दिल्ली-110001

दिसम्बर 2009

विशेष सम्पादकीय

रिपोर्ट 'ले' के पहले 'लीक' ! दोषी कौन? गृहमंत्री या आयोग

रिपोर्ट ने आखिर क्या दिया 'एक और नया विवाद'

प्रभात झा

लिब्राहन आयोग की रिपोर्ट किन कारणों से 'ले' के पहले लीक की गई, वे कारण ज्ञात होते हुए अज्ञात हैं। दो की कस्टडी में एक हजार पेज की रिपोर्ट। एक आयोग दूसरा गृहमंत्री। फिर अखबार में कैसे आया? दोषी किसे मानें? आयोग ने कहा- हमने नहीं किया। गृहमंत्री ने कहा- हमने नहीं किया। सवाल यह उठता है कि लीक फिर किसने किया? लिब्राहन कमीशन की रिपोर्ट कोई कागज का टुकड़ा नहीं बल्कि 17 साल की मेहनत का प्रतिफल था। कौन जवाबदेह? किसको दोषी कहें? विपक्ष चिल्लाया तो कहा रिपोर्ट 'ले' कर देंगे। लीक कैसे हुआ, का उत्तर यह नहीं है कि 'ले' कर देंगे। यह प्रश्न आज भी अनुत्तरित है। क्या यह शंका करना विपक्षियों के लिए कि सत्तारुढ़ दल ने झारखंड में होने वाले चुनाव की दृष्टि से ऐसा किया है, गलत होगा? ऐसा इसलिए मन में उत्पन्न होता है कि यूपीए सरकार ने गोधरा कांड पर बनर्जी आयोग की रिपोर्ट बिहार के चुनाव के समय जाहिर की थी।

सरकार 'ले' से पहले मसले पर फंस गई। ऐसा नहीं होना चाहिए था। यह एक गलत परम्परा की शुरुआत ही नहीं बल्कि दो विश्वसनीय संस्थाओं गृहमंत्रालय और चुनाव आयोग दोनों कटघरे में खड़ी हो चुकी हैं। यह देश के लिए सर्वाधिक चिंता का विषय है।

अब हम विचार करें कि क्या जस्टिस लिब्राहन को इस रिपोर्ट को लीक करने से कोई नफा नुकसान होना था? अगर नफा-नुकसान होना भी था तो सिर्फ सरकार को या विपक्ष का। विपक्ष के पास रिपोर्ट थी नहीं। तब कौन दोषी?

दूसरा सवाल यहां उठता है कि जब विपक्ष ने रिपोर्ट लीक होने के बाद हंगामा किया तो दूसरे दिन रिपोर्ट 'ले' कर दी गई। तो फिर इतने दिनों से कमीशन की रिपोर्ट दबाई क्यों रखी गई थी? हंगामे के एक दिन बाद पेश होने वाली रिपोर्ट अब

तक पेश क्यों नहीं की गई? क्या कारण थे? सरकार की नीयत में निश्चित ही कोई न कोई खोट थी।

देशवासियों को यह जानने का पूरा हक है कि लिब्राहन कमीशन आखिर किस सच तक पहुंचा है? यह सच है कि ऐसी रिपोर्ट संसद में पेश करने के लिए सरकार के पास छह माह का समय होता है। पर इसका अर्थ यह तो नहीं हो सकता कि छह माह की अवधि के अंतिम दिन का ही सरकार इंतजार करती रहे और इस बीच अन्य राजनीतिक मुद्दों पर खुद को घिरा पाकर रिपोर्ट लीक कर सरकार उसका राजनीतिक लाभ लेने के लिए इस्तेमाल भी करे।

हल्ला-हंगामे के बाद रिपोर्ट पेश हुई। सत्रह साल लगाकर जो हासिल किया गया, उससे देश को क्या हासिल हुआ? रिपोर्ट के अंत में नत्थी साठ पन्ने की सिफारिशों में सैद्धान्तिक रूप से कुछ बातें कही गयी हैं और धर्मनिरपेक्षता पर एक लंबा भाषण झाड़ दिया गया है।

आप सभी को ज्ञात होगा कि लिब्राहन कमीशन का गठन 16 दिसम्बर 1992 को हुआ था और उसे तीन माह के भीतर अपनी रिपोर्ट पेश करनी थी। अगर निर्णय के अुनसार सोचें तो यह रिपोर्ट 16 मार्च 1993 में आ जानी चाहिए थी। अगर ऐसा होता तो इसका महत्त्व होता और यह भी देखने में आता कि तत्कालीन प्रधानमंत्री नरसिंह राव और उनकी सरकार का क्या रुख है। उनकी सरकार की परीक्षा भी हो जाती।

अगर विचार करें और रिपोर्ट को पढ़ें तो लगता है कि जो कार्य लिब्राहन कमीशन को दिया गया था, वह उस कार्य को छोड़कर दूसरे विषयों पर ज्यादा ध्यान दे दिए। 17 वर्ष बाद आए इस रिपोर्ट का अब कोई औचित्य बचा है। ऐसा लगता नहीं। फिर भी हमारे कानून मंत्री कहते हैं कि यह रिपोर्ट फैक्ट फाइण्डिंग्स रिपोर्ट है। सवाल यह उठता है कि इस रिपोर्ट में फैक्ट्स क्या है? यह रिपोर्ट तो सिफारिशों से भरा पड़ा है। कोई बताए कि इसमें फैक्ट्स क्या हैं?

हम सवाल करें कि क्या आयोग द्वारा सत्य के रहस्योद्घाटन के लिए सभी तथ्यात्मक पक्षों की जांच की गई है? क्या आयोग ने मीडिया रिपोर्टों व अन्य स्रोतों का अध्ययन किया है? ताकि सत्य का पता चले? अगर ऐसा होता तो आयोग उस समय मीडिया में आए बातों को नजरअंदाज नहीं करता। सितम्बर 1997 में स्व. आ.के. मलकानी ने कहा था कि आई.एस.आई. के एजेन्ट्स कारसेवकों के बीच आ घुसे थे तथा विवादित ढांचे को ध्वस किया था। क्या आयोग ने स्व. मलकानी का सामना किया था तथा इस संबंध में उनसे प्रश्न किए थे?

लिब्राहन कमीशन को विवादित ढांचे के ढहने की परिस्थितियों की जांच करने के लिए कहा गया था जबकि उनसे उस बातों पर अपनी राय दी है, जो जांच

के दायरे के बिल्कुल बाहर है, मसलन राजनीति और धर्म के बारे में मीडिया आदि के बारे में कमीशन की राय बिल्कुल अप्रसांगिक है। रिपोर्ट में जांच की रिपोर्ट के बजाए उपदेशात्मक रुख अधिक अख्तियार किया है। इसी कारण से लिब्राहन कमीशन की रिपोर्ट की बात गलत और तथ्य से परे लगता है।

तीन माह में रिपोर्ट प्रस्तुत होती तो पांच सात लाख रुपए में रिपोर्ट तैयार हो जाती। हुआ क्या 17 साल लगाए गए। 48 बार इस आयोग का कार्यकाल बढ़ाया गया और आठ करोड़ रुपए खर्च किए गए। परिणाम क्या निकला। रिपोर्ट पूरी तरह पक्षपातपूर्ण राजनीति प्रेरित और किसी खास दल के हितों को देखते हुए तैयार की हुई लगती है।

अटलजी थे या नहीं थे। उनकी क्या भूमिका थी? अगर थी तो क्या आयोग ने अपनी जांच अधिनियम 1952 के (खण्ड 8वीं) में कहे गए इस बात को कि अनुपस्थित व्यक्ति को आयोग दोषी नहीं ठहरा सकता। फिर अटलजी का नाम कैसे? आज तक उनको समन ही जारी नहीं किया गया। आप जानकर हैरत में पड़ जाएंगे कि अटलजी के नाम पर इस रिपोर्ट में 22 बार टिप्पणियां की गई हैं? क्या इसे उचित कहा जा सकता है?

दूसरी तरफ देखें कि बाबरी मस्जिद के पैरोकारों- जिसमें सैय्यद शहाबुद्दीन जैसे लोग शामिल हैं, को सांप्रदायिक सौहार्द को बिगाड़ने में दोषी नहीं पाया गया। गौरतलब है कि ये वही लोग हैं जिन्होंने 1987 में गणतंत्र दिवस का बहिष्कार करने का प्रयास किया था। फिर इन लोगों की कार्यवाहियों पर आयोग चुप है। आयोग पर 'कलर ब्लाइंडनेश' का आरोप लगाना स्वाभाविक है।

रिपोर्ट की पोल तो स्वत: खुल जाती है जब वह कहता है तत्कालीन प्रधानमंत्री नरसिंह राव को विवादित ढांचे गिराए जाने का दोषी नहीं पाया गया है। उन्हें सिर्फ दिन में सपना देखने वाला प्रधानमंत्री बताकर बरी कर दिया है। इतना ही नहीं रिपोर्ट ने तत्कालीन केन्द्रीय सत्ता के किसी भी अंग पर उंगली नहीं उठाई है। यह कैसे संभव है कि इतना बड़ा ढांचा गिर गया और केन्द्र सरकार को भनक तक नहीं लगी। यह कितनी हास्यास्पद बात है कि इतनी बड़ी घटना घट गई और लिब्राहन कमीशन को केन्द्र सरकार की कहीं कोई भूमिका नजर नहीं आई।

जबकि सबको विदित है कि कांग्रेस ने स्व. नरसिंह राव को दोषी पाया और उन्हें 1998 के लोकसभा चुनाव में टिकिट देने से इंकार कर दिया। यही नहीं इस विवादित ढांचे के गिराए जाने पर कांग्रेस पार्टी दो बार माफी मांग चुकी है। पहली बार तत्कालीन पार्टी अध्यक्ष सीताराम केसरी और फिर श्रीमती सोनिया गांधी ने माफी मांगी। लेकिन लिब्राहन कमीशन स्व. नरसिंह राव और उनकी पार्टी कांग्रेस पर पूरी तरह मौन है।

रिपोर्ट में कहा गया है कि विवादित ढांचा के विध्वंश के बाद शहर के चारों ओर प्रदर्शनकारियों द्वारा लूट और हत्या का तांडव मचाया गया। 20 से अधिक एक वर्ग विशेष के लोग मारे गए। इन्हें चुपचाप दफना क्यों दिया गया? प्रश्न यह उठता है कि कहीं से बाहर से आए आतंकवादी तो नहीं थे? पुलिस ने शक के आधार पर 35 लोगों को दंगा करने के जुर्म में गिरफ्तार किया था, पर बाद में प्रमाण के अभाव में सभी को छोड़ दिया गया। उन लोगों पर टाडा क्यों नहीं लगाया गया?

सारा देश जानता है कि 14 अगस्त 1988 को उच्च न्यायालय ने प्लाट 586 जो विवादित ढांचा से सटा हुआ था, को गैर-विवादास्पद बताया और 17 अगस्त को उस फैसले के बाद भी तत्कालीन गृमंत्री बूटासिंह और विहिप नेता विनय कटियार में लिखित समझौता हुआ। 7 नवम्बर को उच्च न्यायालय ने दोबारा वही फैसला किया (किंतु नवंबर में कारसेवा हुई)। अगले दिन अयोध्या के जुड़वा नगर फैजाबाद में प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने संसदीय आम चुनाव में कांग्रेस के चुनाव अभियान की शुरुआत की और 'राम राज्य' की स्थापना को अपना लक्ष्य घोषित किया। किंतु लिब्राहन कमीशन ने बूटासिंह, राजीवगांधी और पी.वी. नरसिंह राव के नाम आरोपियों में नहीं जोड़े हैं।

एक और मजेदार मामला है कि आयोग ने दोषी ठहराए गए व्यक्तियों को तरह-तरह की संज्ञाओं से तो नवाजा है, लेकिन किसी के खिलाफ परिस्थितिजन्य साक्ष्यों का कोई उल्लख नहीं किया गया है। यह कैसी जांच? रिपोर्ट को अगर दो पंक्तियों में समझना हो तो यह है कि किसी भी सूरत में राजनीति और धर्म को नहीं जोड़ा जाना चाहिए। राजनीतिक सत्ता हासिल करने के लिए ऐसा करने वालों को लिए बड़ी सजा का प्रावधान होना चाहिए।

पूरी रिपोर्ट में आयोग ने कुछ राजनीतिक दलों को संकीर्ण राजनीतिक स्वार्थों को साधने का मौका ही दिया है, न कि तथ्यपरक जांच की है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि आयोग की रपट में तथ्य कम है और राजनीतिक बयानबाजी अधिक है।

'लिब्राहन कमीशन' की रिपोर्ट के पीछे सरकार की जो मंशा रही थी, वह कितनी पूरी हुई वह सरकार जाने। एक सामान्य व्यक्ति तो यही कहेगा कि समय, और पैसे बरबादी की ऐसी मिसाल कहीं और नहीं मिलेगी। इतना सब करने के बाद भी क्या हुआ? रिपोर्ट 'ले' से पहले 'लीक' हुई और रिपोर्ट के प्रति सारी गम्भीरता समाप्त हो गई। स्थिति इससे बुरी क्या हो सकती है कि 17 वर्ष, 400 बैठकें, 48 बार समय बढ़ाए जाने और 8 करोड़ रुपए खर्च करने के बाद भी लिब्राहन कमीशन की रिपोर्ट एक नए विवाद देने के बजाए कुछ नहीं दिया? ■

(लेखक भाजपा के राष्ट्रीय सचिव और सांसद हैं)

लिब्राहन आयोग रिपोर्ट लीक :

l्ln e Hkk"k.k

अयोध्या में एक भव्य राम मंदिर बनाना मेरे जीवन की साध है : लालकृष्ण आडवाणी

लोकसभा में विपक्ष के नेता श्री लालकृष्ण आडवाणी द्वारा दिए गए भाषण का संपादित पाठ :–

मुझे जहां तक स्मरण आता है, मैंने जीवन में कभी पहले प्रश्नोत्तरकाल स्थगित करने की प्रक्रिया का उपयोग करने की कोशिश नहीं की। पहली बार मैंने नोटिस दिया है। आज प्रातः काल जब मैंने इंडियन एक्सप्रेस देखा तो मैं हैरान हुआ कि अभी तक तो यह रिपोर्ट सदन के सामने भी नहीं रखी गयी, सदन को भी नहीं बतायी गयी, तो इंडियन एक्सप्रेस को किसने बतायी और क्यों बतायी? मेरे एक साथी ने ''इंडियन एक्सप्रेस'' के एडीटर से सीधे पूछा तो उन्होंने कहा कि मैं आपको कह सकता हूं कि यह ऑथेन्टिक है। इसमें कोई तथ्य हमने कपोल–कल्पित करके छापा हो, ऐसा नहीं है। मैं नहीं जानता हूं। मैं आश्चर्यचकित हूं। अगर कोई यह कहता है कि आडवाणी अयोध्या के उस अवसर पर, लोगों को संग्रहित करके वहां पर लाये, इतनी बड़ी संख्या में लोग वहां आए, इसीलिए यह घटना हो गयी। कोई कह सकता था, मैं अपेक्षा करता था कि शायद कोई कहेगा। इसमें इन्डाइटमेंट शब्द का प्रयोग किया गया है, इसमें दो बातें कही गयी हैं।

सम्मानित सदस्य को जानकारी होनी चाहिए कि वह कतरन देकर ही उसके आधार पर मैंने प्रॉपर परमीशन मांगी है, क्योंकि I was shocked to see this report. जिस रिपोर्ट में मेरे वरिष्ठ नेता और काफी समय से अस्वस्थ चल रहे वाजपेयी जी को भी इनडाइट करने की बात कही गई है।

मुझे इनडाइट करते तो मैंने कहा कि मैं उसकी चुनौती को स्वीकार करता, चुनौती मानता। हवाला में मुझे इनडाइट करने की कोशिश की, मैंने चुनौती मानी।

मेरा इनडाइटमैंट होता, मेरी पार्टी का इनडाइटमैंट होता, समझ में आता है, लेकिन वाजपेयी जी का उल्लेख देखकर मुझे लगा कि मेरा कर्तव्य बन

जाता है कि जिनके नेतृत्व में मैंने जीवनभर राजनीति में काम किया, उनके खिलाफ, उनकी आज की अवस्था में कोई इस प्रकार की बात कहे और कही गई है।

मैं इसलिए उसके बारे में डिटेल में नहीं जाता हूं, क्योंकि मैं चाहूंगा कि यह रिपोर्ट सरकार को जून के महीने में दी गई और जून के बाद आज नवम्बर का महीना पूरा होने को आया है, बीच में एक सैशन हो चुका है, उस समय गृह मंत्री जी ने यह रिपोर्ट सदन के सामने नहीं रखी।

आज दूसरा सैशन शुरू हुए भी दो–तीन दिन हो गए हैं। हममें से बहुत सारे लोग समझते थे कि शायद पहले ही दिन यह रिपोर्ट रखी जाएगी, लेकिन नहीं रखी गई, दूसरे दिन नहीं रखी गई। आज तीसरा दिन है तो अचानक हम अखबार में मोटे तौर पर इस प्रकार की खबर देखते हैं और एडीटर कहते हैं कि यह ऑथैंटिक रिपोर्ट है। उसमें थोड़े–बहुत शब्द बदले होंगे, मैं नहीं जानता। मैं इतना जानता हूं कि इस रिपोर्ट के पब्लिश होने के बाद एक दिन का भी विलंब करने का अधिकार सरकार को नहीं है, तुरंत रखनी चाहिए।

मैं मांग करता हूं कि यह रिपोर्ट ज्यों की त्यों आज ही, सदन इसके बाद कोई दूसरी कार्यवाही न करे, इस रिपोर्ट को यहां पर रखने की मुझे इजाजत चाहिए। मैं दूसरी कोई मांग नहीं कर रहा हूं, मैं इतना जरूर कह रहा हूं कि अगर यह बात सही है जो इसमें लिखी है, तो यह दोनों बातें सरासर असत्य हैं, मैटिकुलसली प्लैंड। कोई षडयंत्र नहीं था, कोई योजना नहीं थी, यह घटना हुई जिस घटना के बारे में स्वयं लिब्राहन कमीशन के सामने कहा।

मैंने उसके बाद तुरंत लिखा हुआ है कि मेरे लिए एक बहुत दुखद दिन था, "It is the saddest day of my life." यह मैंने स्वयं लिब्राहन कमीशन के सामने कहा। उसकी एवीडैंस में भी आएगा। जहां तक मैंने देखा है कि इस रिपोर्ट में भी उसका थोड़ा सा उल्लेख है। लेकिन मोटे तौर पर मेरी मांग है कि आज बिना दूसरी कार्यवाही किए हुए गृह मंत्री जी इस सदन में वचन दें कि मैं तुरंत इस रिपोर्ट को लाकर सदन के सामने रखूंगा।...

इस रिपोर्ट के नीचे लिखा हुआ है "to be continued?. इस रिपोर्ट को उन्होंने इतना ऑथैंटिक माना कि वे इसे सीरियली देने को तैयार हैं, एक–एक हिस्सा करके, धारावाहिक करके देने को तैयार हैं।

इस प्रकार की रिपोर्ट इस प्रकार अखबारों में छपती रहे, लीकेज होती रहे, It is a breach of privilege of the House, but that is a different

चुनावी फायदे के लिए लीक हुई लिब्राहन रिपोर्ट : राजनाथ सिंह

भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री राजनाथ सिंह ने कांग्रेस के नेतृत्व वाली यूपीए सरकार पर आरोप लगाया है कि उसने झारखंड में होने वाले विधानसभा चुनावों में फ़ायदा लेने के लिए लिब्राहन आयोग की रिपोर्ट को जानबूझकर लीक किया है। यह एक सोची समझी रणनीति के तहत की गयी कार्रवाई है।

श्री राजनाथ सिंह ने कहा कि केंद्र की कांग्रेस सरकार को लिब्राहन कमिशन की रिपोर्ट जून महीने में ही मिल गयी थी। जुलाई में संसद सत्र हुआ लेकिन रिपोर्ट को पटल पर नहीं रखा गया। अब जहां झारखंड में चुनाव हो रहा है ऐन वक्त पर रिपोर्ट जारी होना यह साबित कर रहा है कि कांग्रेस मतों के ध्रुवीकरण के लिये यह घिनौना खेल खेल रही है।

रिपोर्ट में अटलजी समेत भाजपा नेताओं के नाम होने पर श्री राजनाथ सिंह ने कहा, 'देश वाजपेयी के ऊंचे क़द की तारीफ़ करता है। झारखंड में होने वाले चुनावों से ठीक पहले उनकी छवि को तार-तार करने की कोशिश हो रही है। लोग इसका जबाव देंगे क्योंकि भाजपा कभी सांप्रदायिक पार्टी नहीं रही है। सिर्फ़ राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता के चलते राजनीतिक और धर्मनिरपेक्ष समूहों को बदनाम नहीं किया जाना चाहिए। मुझे समझ नहीं आता कि क्यों सरकार राजनीतिक उद्देश्यों के लिए देश की शांति को ख़तरे में डाल रही है? श्री राजनाथ सिंह ने कहा कि जिस तरह से रिपोर्ट लीक की गई है उससे भी लोग दुखी हैं। उनके मुताबिक़ अटलजी, आडवाणीजी और जोशीजी जैसे नेताओं पर उंगली उठाना एक सोची समझी साजिश है।

बाबरी मस्जिद विध्वंस मामले की जांच से जुड़ी लिब्राहन अयोग की रिपोर्ट के लीक होने को अत्यंत गंभीर घटना करार देते हुए भाजपा अध्यक्ष राजनाथ सिंह ने कहा कि गृहमंत्री पी चिदंबरम को इस घटना की नैतिक जिम्मेदारी लेनी चाहिए। उन्होंने कहा, रिपोर्ट लीक मामले में हम विशेषाधिकार हनन का प्रस्ताव लाएंगे। सदन में लिब्राहन आयोग की रिपोर्ट पेश किए जाने के बाद श्री राजनाथ सिंह ने पत्रकारों से कहा, जो रिपोर्ट सरकार को सौंपी गई थी वह किस प्रकार लीक हुई। इसके लिए कौन जिम्मेदार है यह तय होना चाहिए। उन्होंने कहा कि रिपोर्ट की प्रति गृहमंत्रालय और जस्टिस लिब्राहन के पास थी। इसके मद्देनजर गृहमंत्री को इस घटना की नैतिक जिम्मेदारी स्वीकार करनी चाहिए। ■

matter. I have not taken recourse to the Privilege Motion, but I have sought from the Government immediate placing of this Report on the Table of the House. Personally, I am proud of my association with the Ayodhya Movement. I was distressed by the demolition of that structure, but so far as the Movement is concerned, मैं समझता हूं कि मेरे जीवन में मेरा अयोध्या मूवमैंट के साथ जुड़ना और वहां पर जनता की इच्छा के अनुसार उस स्थान पर एक भव्य राम मंदिर बने, यह मेरे जीवन की साध है और जब तक यह साध पूरी नहीं होगी, मैं इसके लिए कार्य करता रहूंगा। आज वहां पर एक मंदिर बना हुआ है और कुछ नहीं है, मंदिर ही है। लेकिन वह मंदिर जिस रूप में है, वह कोई भगवान रामचन्द्र के जन्म स्थान के अनुरूप नहीं है। मैं चाहूंगा कि वैसा ही एक भव्य मंदिर बने। यह मेरे मन की इच्छा है।

आज गृह मंत्री जी से मेरी मांग है कि वह बिना अधिक विलंब के इस रिपोर्ट को सदन के सामने रखें जिससे हमें समझ में आए कि लिब्राहन कमीशन ने क्या कहा है। मेरी कम से कम उनके सामने जितनी एवीडैंस की रिपोर्ट हो गई, निश्चित रूप से दस दिन तक मैंने लिब्राहन कमीशन के सामने अपना बयान दिया, अपना विचार रखा, अयोध्या मूवमैंट के बारे में कहा। डिमॉलिशन मैं कभी एक्सपैक्ट नहीं करता था, डिमॉलिशन जिस प्रकार हुआ, मैं आपको कह सकता हूं कि वहां पर जितने लोग थे, वे राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के थे, विश्व हिन्दू परिषद के थे, बीजेपी के थे। सबने पूरी कोशिश की कि जितने लोग उसे तोड़ रहे थे, आक्रमण कर रहे थे, वे ऐसा न करें। विश्व हिन्दू परिषद् के सबसे बड़े नेता श्री अशोक सिंघल को उन लोगों द्वारा मैन हैंडल किया गया। मुझे इसके अलावा और कुछ नहीं कहना।

■

लिब्राहन रिपोर्ट कांग्रेस का उपन्यास है

विनय कटियार

सत्रह साल के लंबे इंतजार के बाद आई लिब्राहन आयोग की रपट से क्या देश का सांप्रदायिक माहौल बेहतर होगा या और बिगड़ेगा? उससे बाबरी मस्जिद और रामजन्मभूमि विवाद को हल करने में क्या मदद मिलेगी इन विषयों पर अयोध्या आंदोलन के प्रमुख नेता और भाजपा के महासचिव विनय कटियार से रू-ब-रू हुए 'हिन्दुस्तान' के एसोशिएट एडीटर अरुण कुमार त्रिपाठी

लिब्राहन आयोग की रपट ने बाबरी मस्जिद विध्वंस के लिए पूरे संघ परिवार को दोषी ठहराया है। इस रपट पर आप का क्या कहना है?

यह रिपोर्ट दरअसल कांग्रेस का उपन्यास है। इसके लेखक न्यायमूर्ति एम. एस. लिब्राहन हैं। यह उससे ज्यादा कुछ नहीं है। उस समय नरसिंह राव देश के प्रधानमंत्री थे और उन्होंने इस समस्या के समाधान के लिए कुछ नहीं किया। वे चाहते थे कि ढांचा भी टूटे और कई राज्यों में काम कर रही भारतीय जनता पार्टी की सरकारें भी जाएं। वे न तो राम भक्तों के हत्यारे बनना चाहते थे, न ही बाबरी मस्जिद गिराने के जिम्मेदार।

पर लिब्राहन ने जिन 68 लोगों को मस्जिद गिराने के लिए जिम्मेदार ठहराया है उन सब ने माहौल तो बनाया ही था। वही माहौल जिसके चलते मस्जिद गिराई गई?

यह पूरी तरह से एकपक्षीय भाष्य है। इसमें उन लोगों को भी रखा गया है, जो उस समय तक जीवित ही नहीं थे। जैसे कि देवरहा बाबा। वे तो संत थे और उनसे मिलने इंदिरा गांधी भी जाती थी। उनकी मृत्यु छह दिसंबर 1992 के कई साल पहले हो चुकी थी। इसी तरह इस रपट में कई ऐसे लोगों का नाम है, जो छह दिसंबर को अयोध्या में थे ही नहीं। उदाहरण के लिए अटल बिहारी वाजपेयी।

लिब्राहन आयोग के सामने आप की भी गवाही हुई थी। आप ने उनके सामने जो कुछ कहा उसे आयोग ने किस तरह लिया?

देखिए हमने आयोग के सामने विस्तार से बताया था कि जहां मस्जिद बनाई गई है, उस जगह पर मंदिर होने का जिक्र कई मुस्लिम लेखकों और विद्वानों ने किया है। हमने इस तरह के 30-40 विद्वानों का जिक्र किया था। उनमें

आइने-अकबरी के लेखक अबुल फजल से लेकर मिर्जा जान और उर्दू उपन्यासकार रजब अली बेग तक शामिल थे। उन सब ने वहां राममंदिर होने के साक्ष्य को स्वीकार किया है। ऐसा मानने वालों में मुगल बादशाह औरंगजेब की बेटी जेबुन्निसा भी थी। सहीया अक चहल नसाइन बहादुर शाही में 25 नसीहतों का वर्णन है। बाद में उसकी नकल पर मिर्जा हैदर शिकोह ने भी जो लिखा, उसमें मंदिर को नष्ट किए जाने की बात मानी गई है। इसके अलावा हमने यूरोपीय लेखक विलियम्स के वर्णन का भी उल्लेख किया था। लेकिन दुख की बात यह है कि आयोग ने उनका संज्ञान ही नहीं लिया।

आप तो अयोध्या आंदोलन में शुरू से रहे हैं। क्या उसका शांतिपूर्ण समाधान नहीं हो सकता था?

सन् 1984 में जब हमने अयोध्या आंदोलन शुरू किया, तब भारतीय जनता पार्टी कहीं नहीं थी। न ही इससें विश्व हिंदू परिषद थी। तब हमारे संगठन का नाम था हिंदू जागरण मंच। हमने कानपुर के फूलबाग में सभा की थी, जिसमें अशोक सिंघल को भी बुलाया था। तब रामजन्मभूमि और काशी मथुरा के मंदिरों को मुक्त कराने के लिए जो संगठन बनाया, उसका नाम था धर्मस्थान मुक्त समिति। इस विवाद को हल करने के लिए तीन बहुत अच्छे मौके आए थे, लेकिन उन्हें गंवा दिया गया। तय हो चुका था कि राममंदिर सहमति से बन जाएगा। ऐसा किसकी वजह से हुआ इसका जिक्र मैं नहीं करूंगा।

आज क्या समाधान है? इस रपट के आने के बाद क्या बेहतर माहौल बनेगा या तनाव बढ़ेगा?

आज ज्यादा विवाद बचा नहीं है। बाबरी विवाद तो है ही नहीं। मामला 60-40 का बचा हुआ है। लिब्राहन को चाहिए था कि कमिश्नर जो वहां रिसीवर होता है, उससे भी पूछताछ की जाती। उसकी तहरीर ली जाती। इसमें अजरुन सिंह से भी पूछताछ की जानी चाहिए थी। दिक्कत यही है कि यह रपट नरसिंह राव की किताब 'द इनसाइडर' की हूबहू नकल है। लेकिन मेरा मानना है कि मुस्लिमों से बातचीत कर इसका हल निकाला जा सकता है। उन्हें भी इस देश में रहना है और हिंदुओं को भी।

क्या बाबरी मस्जिद तोड़ने का आपको कोई पछतावा नहीं है?

देखिए आप उसे बार-बार मस्जिद कह रहे हैं, इस पर हमारी आपत्ति है। वह मस्जिद नहीं 'महा जिद' थी। ढांचा जीर्ण-शीर्ण था उस पर लोगों का गुस्सा बरस गया और टूट गया। पर अजरुन सिंह ने तो कहा था कि कश्मीर से कुछ आतंकी आए थे, इस बात की भी जांच होनी चाहिए। (साभार) ■

विसंगतियों का पुलिंदा

रविशंकर प्रसाद

अयोध्या में विवादित ढांचे के ध्वंस के संदर्भ में लिब्राहन आयोग की रिपोर्ट आजकल बहुत चर्चा में है। कानूनी प्रक्रिया के पालन एवं तथ्यों पर आधारित वैधानिक निष्कर्ष, दोनों मामलों में यह रिपोर्ट विसंगतियों से भरी है और तथ्यों से परे है। सांप्रदायिकता, राष्ट्रहित और राजनीतिक विषयों का लोकतांत्रिक निर्णय किस प्रकार से हो, इन सभी पर तथ्यों से परे जाकर अनावश्यक टिप्पणियां की गई हैं। कुछ निष्कर्ष तो पूर्णतया हास्यास्पद हैं। 6 दिसंबर 1992 को अयोध्या की घटनाओं के लिए देवरहा बाबा को भी दोषी पाया गया है, जिन्हें देश का एक बहुत बड़ा जनमानस ईश्वर का अवतार मानता था और जिन्होंने कई वर्षों पहले ही समाधि ले ली। पूर्व कार्यकारी प्रधानमंत्री स्व. गुलजारी लाल नंदा पर भी प्रतिकूल टिप्पणियां की गई हैं, जिनका अयोध्या आंदोलन से दूर तक का संबंध नहीं था। इसके विपरीत लिब्राहन आयोग ने बड़ी ही सफाई से कुछ लोगों को बचाने की कोशिश की है।

एक प्रमुख बिंदु जिस पर आयोग को मंतव्य देना था, उन घटनाओं, तथ्यों और परिस्थितियों की जांच से संबंधित था जिनकी परिणति अयोध्या में 6 दिसंबर 1992 को हुई। स्वाभाविक है इसमें तत्कालीन प्रधानमंत्री पीवी नरसिंह राव, राजीव गांधी एवं उनके काल के गृह मंत्री बूटा सिंह की भूमिका भी सम्मिलित है जब राम जन्मभूमि मंदिर पर ताला खुला और अयोध्या में शिलान्यास हुआ। कांग्रेस पार्टी तो अभी भी नरसिंह राव को दोषी मानती है और इसी कारण 1998 लोकसभा का उनका टिकट भी काटा गया। वरिष्ठ कांग्रेसी नेता अर्जुन सिंह ने तो उन पर सार्वजनिक आरोप लगाया था, किंतु उन्हें भी आयोग ने गवाही के लिए नहीं बुलाया। इसके विपरीत 1000 पृष्ठों की रिपोर्ट के पृष्ठ संख्या 998 पर आयोग ने 68 व्यक्तियों को इस घटना के लिए व्यक्तिगत रूप से दोषी पाया है। कमीशन आफ इन्क्वाइरी एक्ट की धारा आठ-बी के अंतर्गत ऐसे सभी लोगों को नोटिस देकर अपना पक्ष रखना अनिवार्य है जिनकी छवि पर आयोग के निष्कर्षों से प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इस सूची में लगभग 25 लोगों को नोटिस नहीं दी गई, जिनमें अटल बिहारी वाजपेयी और संत स्व. देवरहा बाबा भी शामिल हैं। वाजपेयी के मामले में तो 29 जुलाई 2003 को एक व्यापक आदेश के द्वारा उनको नोटिस

देने के आवेदन को अस्वीकृत कर दिया गया था, फिर भी 17 साल बाद रिपोर्ट को उनको व्यक्तिगत रूप से दोषी पाया गया। यह अनिवार्य कानूनी प्रक्रिया का खुला उल्लंघन है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को इस पूरी घटना के लिए गंभीर रूप से दोषी पाया गया। आयोग के निष्कर्ष संघ के खिलाफ पूर्वाग्रह से ग्रसित प्रतिकूल टिप्पणियों से भरे पड़े हैं। यहां यह उल्लेखनीय है कि 6 दिसंबर 1992 को अयोध्या में ढांचा गिराए जाने के बाद तत्कालीन राव सरकार ने संघ पर अनलाफुल एक्टिविटीज प्रिवेंशन एक्ट 1967 के अंतरगत प्रतिबंध लगाया था, जिसका एक प्रमुख आधार 6 दिसम्बर 1992 की घटनाओं में संघ की योजना और सक्रियता से भी संबंधित था। इस प्रतिबंध की कानूनी परख के लिए उक्त कोर्ट के निर्देशानुसार भारत सरकार ने दिल्ली हाईकोर्ट के न्यायाधीश न्यायमूर्ति पीके बाहरी की अध्यक्षता में एक ट्राइब्यूनल बनाया था। अपने 19 जून 1993 के विस्तृत निर्णय में, जिसमें आईबी के पदाधिकरियों की भी गवाही ली गई थी, न्यायमूर्ति बाहरी ने यह स्पष्ट निष्कर्ष प्राप्त किया कि अयोध्या में ढांचा गिराये जाने की घटना की योजना संघ ने नहीं बनाई थी। भारत सरकार के श्वेत पत्र में भी इसका कोई जिक्र नहीं है। तद्नुसार राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर प्रतिबंध के आदेश को निरस्त कर दिया गया और भारत सरकार की हिम्मत भी नहीं हुई कि इसे सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दी जाए।

अब यहां यह सवाल उठाना बहुत जरूरी है कि अगर 6 दिसंबर 1992 के मात्र सात महीने बाद एक न्यायिक निर्णय में यह स्पष्ट पाया गया कि उक्त घटना की तैयारी और क्रियान्वयन में संघ का हाथ नहीं है तो घटना के 17 साल बाद लिब्राहन आयोग ने बिना पुराने निर्णय की परख किए संघ को जिम्मेदार कैसे मान लिया और गंभीर प्रतिकूल टिप्पणियां कीं। एक प्रखर राष्ट्रवादी संगठन के रूप में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने देश की एकजुटता और सुरक्षा में अभूतपूर्व कार्य किया है, जिस पर हम सभी को गर्व है। तथ्यों को नकारकर आयोग ने जो पूर्वाग्रस ग्रसित टिप्पणियां संघ के खिलाफ की हैं उनकी जितनी भी भर्त्सना की जाए वह कम है। आयोग ने संघ को संविधान के पंथनिरपेक्ष सिद्धांतों का इसलिए विरोधी माना है कि संघ हिंदुत्व और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की बात करता है।

ऐसी टिप्पणी करते हुए लिब्राहन आयोग ने सुप्रीम कोर्ट के 1996 में रमेश यशवंत प्रभु बनाम प्रभाकर काशीनाथ कुंटे मामले के निर्णय का भी ध्यान नहीं रखा, जिसमें सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट रूप से कहा है कि यह धारणा कानूनी रूप से गलत है कि हिंदुत्व अथवा हिंदुत्व की बात करना हिंदू धर्म से अलग मतावलंबियों के खिलाफ नफरत करना है और किसी भाषण में हिंदुत्व की बात करना हिंदू धर्म

अयोध्या आंदोलन का असर

तरुण विजय

लिब्राहन आयोग ने वही किया जो लालू प्रसाद यादव की पहल पर बनर्जी आयोग ने गोधरा कांड के बारे में किया था। सदियों विदेशी, विधर्मी आघातों का अनवरत सिलसिला झेलने के बाद भी हिंदुओं के लिए अपमान और तिरस्कार का दौर खत्म नहीं हुआ। जो लोग ऊंचे पदों पर बैठे प्रभावशाली हिंदुओं को देखकर प्रतिवाद करना चाहते हैं उन्हें अंग्रेजों के जमाने के रायबहादुर और मुगलों के समय के बीरबल याद करने चाहिए। सत्ता और सम्मान के हिस्सों के लिए अपने ही हितों पर चोट करना हमारा पुराना इतिहास रहा है। भगत सिंह के खिलाफ गवाही देने वाले ऐसे ही रायबहादुर हुआ करते थे। आज के भारत पर नजर दौड़ाकर कोई भी समझ सकता है कि हम मुट्ठीभर अंग्रेजों द्वारा इतने वर्षो तक गुलाम कैसे बनाए गए थे। जब सारा देश शहीदों की याद में सिर झुकाए नमन कर रहा था और आतंकवादियों के खिलाफ एकजुटता का प्रदर्शन कर रहा था उस समय देश के प्रधानमंत्री वाशिंगटन में ओबामा के शानदार डिनर का लुत्फ उठा रहे थे। हो सकता है कि उन्होंने इस बहाने कुछ काम की बातें भी की हों, पर शासन व्यवस्था और राजनीति छवि पर ज्यादा निर्भर होती है। चीन यात्रा में ओबामा ने बीजिंग के प्रति बराबरी का व्यवहार दिखाया और भारत को एक शानदार डिनर से खुश किया। जिस समय भारत के शीर्ष नेतृत्व को मुंबई में जनता के साथ मिलकर अपनी श्रद्धांजलि देनी चाहिए थी, विपक्ष आपसी मारकाट में उलझा था। माओवादी पेज तीन के वैसे ही रोमाटिक मसाले बनाए जा रहे हैं जैसे कसाब को बनाया गया है। इस देश की सुप्त आत्मा को संन्यासी समान जीवन की आहुति देकर जिलाने वाले संघ आदोलन के उपहास और उनके कार्यकर्ताओं के तिरस्कार का वह सिलसिला अभी तक जारी है जो अंग्रेजों के समय चला था।

लिब्राहन ने अपनी रपट में अनेक भूलें भी की हैं और विषय भ्रम तो अपार है, जैसे इसमें देवरहा बाबा पर कारसेवा का आरोप लगाया गया है, जबकि उनके एक ज्येष्ठ अनुयायी शिव कुमार गोयल ने बताया कि बाबा तो 19 जून, 1990 को ही

की बात करने के समान है। सुप्रीम कोर्ट का निर्णय देश का कानून है और यह आयोग पर भी लागू होता है, जिसकी अवहेलना की गई। लालकृष्ण आडवाणी ने उपप्रधानमंत्री के रूप में तीन दिनों तक आयोग के सभी प्रश्नों का उत्तार दिया और तमाम तथ्यों की अनदेखी करते हुए आयोग का यह कहना है कि उन्होंने कारसेवकों को ढांचे पर जाने से रोकने की कमजोर कोशिश की। ऐसी ही कई बेतुकी टिप्पणियां कई अन्य नेताओं के बारे में की गई हैं। सबसे गंभीर चिंता आयोग के उस निष्कर्ष से होती है जिसमें यह कहा गया है कि धर्म आधारित राजनीति कर अगर कोई पार्टी सत्ता में आती है तो उसे प्रतिबंधित कर देना चाहिए। निश्चित रूप से धर्म एक व्यापक शब्द है और अगर वोट बैंक की राजनीति अथवा छद्म पंथनिरपेक्षता के विरोध में एक बड़ा राजनीतिक और सामाजिक मुद्दा देश की जनता को प्रभावित करता है तथा उसके आधार पर किसी राजनीतिक दल को बहुमत मिलता है तो ऐसे लोकतांत्रिक जनादेश को क्या लिब्राहन आयोग के अनुसार निरस्त कर देना चाहिए? क्या यह आयोग लोकतंत्र के अभिमत का पंच बनेगा? ये तो वैधानिक धृष्टता है।

आज दुनिया के करोड़ों हिंदुओं की यह इच्छा है कि अयोध्या में भगवान राम का एक भव्य मंदिर बनना चाहिए, क्योंकि हजारों वर्षों से यह मान्यता है कि प्रभु राम का जन्म अयोध्या में हुआ था। क्या यह धारणा रखना भी सांप्रदायिक है, जैसा कि लिब्राहन आयोग ने माना है। यहां यह सवाल उठाना भी जरूरी है कि सांप्रदायिकता पर लंबे भाषण देते हुए लिब्राहन आयोग ने शाहबानो प्रकरण और उन पार्टियों की राजनीति पर आश्चर्यजनक चुप्पी रखी जो सिमी को एक राष्ट्रवादी संगठन मानते हैं और जिनकी मांग है कि बांग्लादेश से आए सारे घुसपैठियों को भारत की नागरिकता दे दी जाए। स्पष्ट है कि कहीं न कहीं लिब्राहन आयोग पूर्वाग्रह से गंभीर रूप से ग्रसित है और 17 साल के बाद दी गई इस रिपोर्ट का कोई महत्व नहीं रहने वाला है।

(लेखक भाजपा के प्रवक्ता और सांसद हैं)

■

वह ढांचा या भवन वास्तव में एक मस्जिद के रूप में प्रयुक्त हो रहा था?

आज निर्भीक तथ्यपरक लेखन पर कुहासा छाया हुआ है। अयोध्या आदोलन इसी कुहासे के अंत का प्रयास था। उसमें हिंदू, मुसलमान, सभी वर्गों के लिए राष्ट्रीयता की भावना को साथ में लेकर चलने का संदेश था। गंदे तीर्थस्थल, जातिवाद का विष, आपसी फूट के कारण विदेशी तत्वों का प्रभाव, दमित, शोषित वर्ग को उपकरण बनाकर सत्तारोहण, इन सबके विरुद्ध एक सुधारवादी और नवीन भविष्य को गढ़ने का नाम था अयोध्या। उस आदोलन के बाद देश-विदेश के अत्यंत महत्वपूर्ण लोग हिंदुत्व आदोलन से जुड़े, जिनमें पत्रकार गिरिलाल जैन, जनरल जैकब, जनरल कैनडेथ, प्रो. एमजीके मेनन, अभिनेता विक्टर बनर्जी के अलावा वीएस नायपाल जैसे विश्वविख्यात नोबेल पुरस्कार विजेता लेखक भी थे। क्या वह सब निष्फल जाएगा? अयोध्या आंदोलन अपनी दीप्ति और आभा के साथ पुनः देश को आलोकित करेगा, यह विश्वास लेकर ही चलना चाहिए।

(लेखक वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

■

ब्रह्मलीन हो गए थे, जबकि ढांचा गिरा 6 दिसंबर, 1992 को। लिब्राहन ने अयोध्या का प्रसंग उठाया है तो उसका हिसाब चुकाना ही होगा। अयोध्या सिर्फ एक मंदिर के निर्माण का प्रश्न नहीं, बल्कि राष्ट्र जीवन की चेतना के जागरण का आंदोलन था, जो सोमनाथ रक्षा के हिंदू संघ की सेनाओं की भांति भीतरी छल का शिकार हुआ। उसमें इस देश का सामान्यजन पूरी निष्ठा के साथ जुड़ा था। इस आंदोलन ने पहली बार देश में जाति की सीमाएं तोड़कर ज्वार पैदा किया था। बरसों की गुलामी की मानसिकता का बंधन टूटने लगा था। अपने पूर्वजों में श्रीराम को भी शामिल करने वाले मुस्लिम बंधु भी इस आंदोलन से जुड़े थे, जो बाबर को विदेशी हमलावर मानते थे। इस आंदोलन ने देश की राजनीति का कलेवर और दिशा बदल दी। काग्रेस भी इस ज्वार को समझती थी। उसने ताला खुलवाने से लेकर शिलान्यास तक पूरा सहयोग किया। राजीव गांधी द्वारा अयोध्या से चुनाव प्रचार का श्रीगणेश और रामराज्य का वायदा बेमतलब राजनीति नहीं थी। लिब्राहन ने अयोध्या की गलियों में बहे कारसेवकों के खून की पुनः याद दिला दी। राम कोठारी और शरद कोठारी जैसे निहत्थे कारसेवक जय श्रीराम कहते-कहते क्यों मार डाले गए, कोई इसका कभी जवाब मांगेगा? जिन पुलिस अफसरों ने निष्काम सत्याग्रही कारसेवकों को गोलियां मारी उन्हें किनके हाथों पुरस्कार दिए गए, इसका भी कोई तो कभी हाल लिखेगा। किसने कारसेवकों को उत्तेजित कर ढाचा ढहाने तक ले आने की सुनियोजित कार्यनीति बनाई, यह काग्रेस कब तक छिपा सकती है। रज्जू भैया बार-बार नरसिंह राव से अनुरोध करते रहे कि इलाहाबाद हाईकोर्ट का फैसला जल्दी दिलवाइए, ताकि 6 दिसंबर को अयोध्या जाने वाले कारसेवक अविवादित भूमि पर कारसेवा कर सकें और प्रतीकात्मक कारसेवा के बाद शांतिपूर्वक लौट सकें, पर क्या कारण रहा कि घोषित तिथि के बावजूद फैसला टाला गया। हंसराज भारद्वाज की इलाहाबाद यात्रा का क्या मकसद थाघ् ये सब प्रश्न तब सामने आएंगे जब सत्ता की राजनीति में अपना घर जलाकर भी हिंदू हितों के साथ छल न करने वाले लोग आएंगे। इस देश की कोख ऐसे वीर राजनेताओं को जन्म देगी ही। कब तक? यह समय के गर्भ में छिपा माना जाना चाहिए। सैन्य शक्ति से देश नहीं बनते, गिरोह बन सकते हैं। देश बनता है स्वाभिमान, सभ्यता और चरित्र से। जो अपने पूर्वजों का नहीं हो सकता वह अपनी मातृभूमि का कैसे हो सकता है? प्रसिद्ध शायर इकबाल ने श्रीराम को इमामे हिंद कहा था और बाबर महज एक लुटेरा हमलावर था। संपादक एवं सांसद नरेंद्र मोहन ने अपनी पुस्तक 'हिंदुत्व' में विवादित ढाचे के गिराए जाने से असहमति प्रकट करते हुए लिखा था-जिस ढांचे को गिराया गया उसकी क्या पृष्ठभूमि थी? क्या

आयोग मतलब राजनीति

रामबहादुर राय

जिस मौके पर लिब्राहन आयोग की रिपोर्ट लीक हुई है, उससे साफ पता चलता है कि यह आयोग राजनीतिक इस्तेमाल के लिए बना था। इसके पीछे दूसरे मूल मुद्दों से ध्यान हटाने की कोशिश भी हो सकती है और झारखंड में चुनाव भी इसका कारण हो सकता है। 16 दिसम्बर 1992 को लिब्राहन आयोग बना था। तत्कालीन प्रधानमंत्री नरसिंहराव के एक सलाहकार हुआ करते थे ए.एन. वर्मा। बताया जाता है, वर्मा के यहां जस्टिस एम.एस. लिब्राहन किसी पद की लालसा में जाया करते थे।

वर्मा को लगा कि यह आदमी जैसा हम चाहेंगे, वैसा करेगा, इसलिए उन्होंने प्रधानमंत्री को सलाह देकर लिब्राहन को बाबरी विध्वंस की जांच के लिए गठित आयोग का अध्यक्ष बनवा दिया। जब आयोग बना था, तब यह स्पष्ट रूप से लिखित था कि आयोग अधिकतम एक साल में अपनी रिपोर्ट दे देगा, लेकिन आयोग समय काटता रहा। छह-छह महीने कार्यकाल बढ़ता रहा। कुल 48 बार कार्यकाल बढ़ा। आयोग को इस बात का पता लगाना था कि 6 दिसम्बर 1992 की घटना स्वत:स्फूर्त थी या उसके पीछे षड्यंत्र था, यह खोजने में लिब्राहन को 17 साल लग गए। एक साल का काम 17 साल में किया गया। बीच में केन्द्र में पांच सरकारें बनल और गई। लिब्राहन की अध्यक्षता में जिस तरह से काम हुआ, उससे आयोग की निरर्थकता स्वयं साबित हो जाती है। आयोग की धीरे-धीरे विश्वसनीयता खत्म हो गई।

जांच आयोग एक कानून के तहत काम करता है। आयोग को सुबूतों के आधार पर केवल सिफारिश करनी होती है। उसके बाद सम्बन्धित मंत्रालय विचार करता है, अफसर रिपोर्ट पढ़ते हैं। उसके बाद वे कार्रवाई के लिए मंत्री से सिफारिश करते हैं। मंत्री उसे मंत्रिमंडल में ले जाते हैं, एटीआर अर्थात् एक्शन टेकेन रिपोर्ट तैयार होती है। रिपोर्ट में कोई सनसनीखेज सिफारिश होने पर देखा जाता है कि उसकी पुष्टि के लिए ठोस सुबूत हैं या नहीं। उसके बाद अपराध दर्ज किया जाता है, गिरफ्तारी होती है।

जरूरी है कि लिब्राहन आयोग की रिपोर्ट कार्रवाई रिपोर्ट के साथ संसद में पेश की जाए। सरकार को ऐसा करना ही होगा। इसमें कोई शक नहीं है कि आयोग राजनीतिक दावपेंच का हिस्सा था। रिपोर्ट 2009 के चुनाव को ध्यान में रखते हुए तैयार की गई थी, लेकिन मनमोहन सिंह की सरकार पहले रिपोर्ट को उछालने की हिम्मत नहीं कर सकी। उसे आशंका थी कि रिपोर्ट आने से भाजपा के वोट बढ़ जाएंगे और यूपीए फिर सरकार नहीं बना पाएगी।

अब संसद चल रही है, सबसे बड़ा सवाल है कि किसने लीक किया। विपक्ष अगर दम दिखाए, तो सरकार को सकारात्मक रूप से घेर सकता है। वह मांग कर सकता है कि जिसने रिपोर्ट लीक की है, उसके खिलाफ कड़ी कार्रवाई की जाए। बहस का मुद्दा यह नहीं है कि लिब्राहन आयोग ने क्या सिफारिश की है, बहस तो इस पर होनी चाहिए कि उसने समय पर काम क्यों नहीं किया। आयोग के लिए आम लोगों की जेब अर्थात् सरकारी खजाने से जो पैसा खर्च हुआ है, वह लिब्राहन से क्यों न वसूला जाए? क्या ऐसे आयोगों का तमाशा संसद यों ही देखती रहेगी? क्या यही तरीका है, रिटायर्ड जजों को आयोगों का अध्यक्ष बना दिया जाए और वे कार्यकाल मनमर्जी से लगातार बढ़ते चले जाएं। इस बात पर विचार होना चाहिए कि निर्धारित समय में काम न करने वाले आयोग को बीच में ही क्यों न भंग कर दिया जाए। उससे जुर्माना क्यों न वसूला जाए?

ज्यादातर आयोगों का कार्य हास्यास्पद रहा है। जैन आयोग राजीव गांधी हत्या की षड्यंत्र की छानबीन के लिए बना था। आयोग ने आठ प्रारूप गढ़े थे, हरेक प्रारूप दूसरे प्रारूप को काटता था, किसी निष्कर्ष पर पहुंचना दूर की कौड़ी थी। जैन आयोग ने 13 खंडों में रिपोर्ट दी और उस रिपोर्ट को संसद की लाइब्रेरी में रख दिया गया, उसे कोई नहीं पढ़ता है, उसका कोई महत्व नहीं है। लिब्राहन आयोग की रिपोर्ट का भी यही हश्र होने वाला है।

रिपोर्ट में क्या है, यह तो साफ तौर पर तभी पता चलेगा, जब रिपोर्ट संसद पटल पर आएगी। अभी कयास लगाए जा रहे हैं, रिपोर्ट में अटल बिहारी वाजपेयी का नाम है, लेकिन तत्कालीन प्रधानमंत्री राव का नाम गायब है। ऐसा लगता है कि जानबूझकर अखबार विशेष को रिपोर्ट दे दी गई। उस अखबार को समझ-बूझकर चुना गया है, ताकि सरकार की नाक न कटे। कई बार यह साबित हुआ है, यह बेपेंदी की सरकार है, कामकाज की निर्धारित परम्पराओं से इसका कोई लेना-देना नहीं है। लेना-देना होता, तो रिपोर्ट बजट सत्र में ही सदन में पेश कर दी जाती।

एक और बात ध्यान देने योग्य है कि सरकार किसी भी आयोग की सिफारिशों को नहीं मानती है। महात्मा गांधी की हत्या की जांच के लिए गठित आयोग हो या

सुभाष चंद्र बोस का पता लगाने के लिए गठित आयोग या सांप्रदायिक दंगों की जांच करने वाले आयोग, किसी की भी सिफारिश पूरी नहीं मानी गई। इंदिरा गांधी हत्या की जांच के लिए ठक्कर आयोग बना था। ठक्कर आयोग ने नाम लेकर एक दिग्गज कांग्रेस नेता की ओर इशारा किया था, लेकिन राजीव गांधी जब प्रधानमंत्री बने, तब उन्होंने उस कांग्रेसी नेता को अपने साथ रख लिया। वह नेता आज भी कांग्रेस में सम्मान के साथ उच्च स्तर पर विराजमान है।

संसद और सरकार को गंभीरता से विचार करना चाहिए। आयोग इसलिए बनाए जाते हैं, ताकि लोकतंत्र पर लोगों का विश्वास बढ़े। आम आदमी को यह हक है कि वह आयोगों और उनकी रिपोर्टों की सच्चाइयों को जाने।

(लेखक जाने-माने वरिष्ठ पत्रकार हैं)

■

चिदम्बरम ने जानबूझ कर लीक की रिपोर्ट : सुषमा स्वराज

भारतीय जनता पार्टी ने आरोप लगाया है कि अयोध्या में बाबरी मस्जिद ढांचे को गिराये जाने की जांच कर रहे लिब्राहन आयोग की रिपोर्ट के चुनिंदा अंश समाचार पत्रों में लीक करोन के लिये गृह मंत्रालय नहीं लेकिन स्वयं गृहमंत्री पी. चिदंबरम जिम्मेदार हैं अत: उन्हें अपने पद से तत्काल इस्तीफा देना चाहिए। भाजपा की लोकसभा में उपनेता सुषमा स्वराज ने पार्टी की नियमित प्रेस ब्रीफिंग में कहा है कि सरकार द्वारा आज संसद में पेश आयोग की रिपोर्ट देखने से इस बात का पता चलता है कि समाचार पत्रों में प्रकाशित हुए चुनिंदा अंश अक्षरश: सही हैं। उन्होंने कहा कि चुनिंदा अंश समाचारपत्रों में लीक होने को चिदंबरम 'दुर्भाग्यपूर्ण' कहते हैं और यही रिपोर्ट गृह मंत्रालय ने नहीं बल्कि स्वयं चिदंबरम ने ही समाचारपत्र को लीक की है और इसके लिये उन्हें अपने पद से तत्काल इस्तीफा देना चाहिए। श्रीमती स्वराज ने कहा कि जांच आयोग की रिपोर्ट का अभी तक पूरी तरह अध्ययन नहीं किया है।

बदलते वक्त में बेमानी है यह रिपोर्ट

अवधेश कुमार

निस्संदेह, केन्द्र सरकार लिब्राहान आयोग की रिपोर्ट को संसद के पटल पर रखने के लिए अभी तैयार नहीं थी। इसी कारण उसका केवल अंग्रेजी संस्करण ही रखा जा सका और उसकी भी काफी कम प्रतियां उपलब्ध हुई। साफ है कि एक समाचारपत्र ने लिब्राहन आयोग की रिपोर्ट लीक करने का दावा नहीं किया होता और उसे आधार बनाकर संसद में सम्पूर्ण विपक्ष के एक स्वर से उसे पेश करने की मांग न की होती तो सरकार इसे पेश करने में कुछ समय और लगाती। 30 जून को न्यायमूर्ति मनमोहन सिंह लिब्राहन ने प्रधानमंत्री को रिपोर्ट पेश की और कायदे से इसे संसद में रखने के लिए सरकार के पास छह महीने का समय था। संसद में मचे बवाल पर गृहमंत्री पी. चिदंबरम ने कहा भी था कि सरकार कार्रवाई रिपोर्ट के साथ इसी सत्र में लिब्राहन रिपोर्ट पेश करेगी। संसद के स. के बीच यदि पूरी रिपोर्ट या उसके कुछ अंश बाहर आ गए तो यह यकीनन संसदीय विशेषाधिकार पर आघात है। हालांकि जो अंश प्रकाशित हुए वे मूल रिपोर्ट में भी हैं। जाहिर है, कहीं न कहीं से कहीं से रिपोर्ट के कुछ अंश अवश्य बाहर आए। गृहमंत्री पी. चिदंबरम ने कहा कि आयोग के रिपोर्ट की एक ही कॉपी गृहमंत्रालय के पास है। उन्होंने यह बयान संसद में दिया, इसलिए इस पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है। अगर ऐसा है तो फिर वहां से लीक होने का कोई कारण नहीं होना चाहिए। न्यायमूर्ति लिब्राहन ने भी कहा कि उनका नैतिक-पतन इतना नहीं हुआ कि वे रिपोर्ट लीक कर दें। रिपोर्ट के अंश चाहे जिस स्रोत या स्रोतों से बाहर आए हों, यह संसदीय विशेषाधिकार पर आघात है और तह तक जाकर ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए ताकि आगे इसकी पुनरावृत्ति न हो सके।

लेकिन इस मामले को हम संसद पर ही छोड़कर लिब्राहन रिपोर्ट की ओर लौटें। प्रश्न है कि क्या वाकई इस समय लिब्राहन रिपोर्ट के सामने आने से बाबरी विध्वंस मामले में कोई गुणात्मक अंतर आएगा? हमने कभी इस बात पर विचार किया है कि 17 वर्ष बाद आए ऐसी रिपोर्ट का किसी भी दृष्टिकोण से कोई औचित्य भी है या नहीं? बाबरी विध्वंस से संबंधित ऐसे कौन से तथ्य देश के सामने पहले से उपलब्ध नही हैं जो लिब्राहन रिपोर्ट के कारण उजागर हुए हैं?

लिब्राहन रिपोर्ट में जिन 68 नेताओं का नामोल्लेख किया है वे सारे पहले से ज्ञात हैं। वास्तव में भाजपा सहित संघ परिवार के सभी प्रमुख नेताआं को किसी न किसी तरह इसके लिए दोषी करार दिया गया है। संघ परिवार और उससे जुड़े दूसरे संगठनों की भूमिका पर भी आयोग ने प्रकाश डाला है। जहां तक अटल बिहारी वाजपेयी का प्रश्न है तो इन्हें सीधे बाबरी विध्वंस से न जोड़कर भड़काऊ भाषण देने का दोषी पाया गया है। यह बड़ी विचित्र स्थिति है कि आयोग ने वाजपेयी को गवाही के लिए बुलाना तक मुनासिब नहीं समझा। यही बात शंकरसिंह बाघेला के साथ भी है। इन दोनों से पूछताछ किए और उनको अपनी बात रखने का मौका दिए बिना आयोग कैसे उनको दोषी मानने के निष्कर्ष पर पहुंच गया? कई दूसरे नेताओं और अधिकारियों के बारे में भी ऐसा ही है। देखा जाए तो उस समय केन्द्र एवं राज्य सरकार में जो भी संबधित विभागों से जुड़े मंत्री या अधिकारी थे, उन सबको किसी न किसी तरह बाबरी विध्वंस का दोषी माना है। वास्तव में इन कारणों से यह अत्यंत ही साधारण दर्जे की रिपोर्ट बन गई है।

बावजूद इसके यदि सरकार कह रही है कि उसने रिपोर्ट को स्वीकार किया है तो उसे यह साफ करना चाहिए कि इसके आधार पर वह कार्रवाई क्या करने जा रही है? 13 पृष्ठों की कार्रवाई रिपोर्ट में भी रिपोर्ट के आधार पर नए सिरे से मुकदमें के बारे में कुछ नहीं कहा गया है। किसी नेता या अधिकारी के खिलाफ कानूनी कार्रवाई का संकेत इसमें नही है। केवल यह का गया है कि बाबरी विध्वंस से संबंधित न्यायालयों में चल रहे मुकदमों की गति तेज की जाएगी। इसके लिए लिब्राहन रिपोर्ट की कोई आवश्यकता थी क्या? कार्रवाई रिपोर्ट में अन्य जो बातें कही गई हैं वे भी ऐसी ही हैं। मसलन, राष्ट्रीय एकता परिषद को वैधानिक अधिकार देना, आपराधिक न्याय आयोग की स्थापना, दंगों के क्षेत्र को कब्जे में लेने का केन्द्र सरकार को अधिकार देने के लिए कानून बनाना, सरकारी अधिकारियों के लिए धार्मिक संस्थाओं में पद लेने का निषेध आदि। इसमें राम जन्मभूमि-बाबरी मस्जिद विवाद के समाधान के लिए राजनीतिज्ञों की बजाय विशेषज्ञों की समिति बनाने की बात कही गई है। कह सकते हैं कि लिब्राहन रिपोर्ट नहीं आती तो सरकार इन दिशाओं में शायद ही विचार करती। किंतु यह तो हमारे राजनीतिक प्रतिष्ठान की विकृति है कि बाबरी विध्वंस के 17 वर्षों बाद उसे कुछ करने की सूझ आ रही है। वैसे कार्रवाई रिपोर्ट में शामिल होने का अर्थ उनका अमल में आना नहीं है। कार्रवाई रिपोर्ट का स्वरूप भी अनुशंसात्मक ही होता है। इनमें कुछ बातें तो राज्यों के अधिकार क्षेत्र की हैं। केन्द्र किसी राज्य के दंगाग्रस्त क्षेत्र को अपने अधिकार ले, इस पर राज्यों की सहमति आसानी से नहीं हो सकती।

यहां यह ध्यान रखना जरूरी है कि बाबरी विध्वंस मामले में सीबीआई छानबीन कर काफी कुछ पहले से ही सामने ला चुकी है। जिन्हें अभियुक्त बनाया गया उन पर सीबीआई के विशेष रायबरेली न्यायालय में मुकदमा चल रहा है। अन्य 47 मामले लखनऊ के विशेष न्यायालय में चल ही रहे हैं। 17 वर्ष, 399 बैठकें, 100 गवाहों के बयान, 48 बार विस्तार से लिब्राहन आयोग ऐसा कोई तथ्य सामने नहीं लाया है जिससे मामले पर नई रोशनी पड़े। आरोपियों ने सीबीआई की रायबरेली स्थित विशेष अदालत में लिए गए बयानों से अलग आयोग में कुछ कहा ही नहीं। वैसे भी 6 दिसंबर, 1992 को हजारों कारसेवकों की उपस्थिति, उनका बाबरी गुम्बद पर चढ़ना फिर ढांचे को ध्वस्त करने की कोशिश, उपस्थित नेताओं द्वारा ऐसा न करने की अपील, कारसेवकों का उसे अनसुनी करना, फिर ढांचा ध्वस्त करने की कोशिश और पूरी भीड़ का उसका सहभागी बनना, उसकी तस्वीर उतारने वाले पत्रकारों की बेरहमी से पिटाई, उनके कैमरों को तोड़ना आदि सारे दृश्य हमारे सामने हैं। सीबीआई ने इस बात की भी छानबीन की कि क्या विध्वंस के पीछे कोई षड्यंत्र भी था। 16 दिसंबर, 1992 को आयोग का गठन हुआ और उसे अपनी रिपोर्ट तीन महीने के भीतर देनी थी। जहां तक इसके आपराधिक मुकदमें का पहलू है तो महत्व केवल सीबीआई के आरोप पत्र का ही है, लिब्राहन रिपोर्ट का कोई कानूनी महत्व तभी हो सकता है जब इसके आधार पर मुकदमा दर्ज हो। मुकदमा दर्ज होने के बाद भी पुलिस को छानबीन करनी होगी और न्यायालय में उसका आरोप पत्र ही मान्य होगा। अगर यह रिपोर्ट तीन महीने यानी 16 मार्च, 1993 तक आ गई होती तो इसका महत्व होता एवं उस समय की तत्कालीन नरसिंह राव सरकार की परीक्षा भी हो जाती। सच कहा जाए तो बाबरी विध्वंस पर हुई कानूनी कार्रवाई को देखते हुए आज की स्थिति में आयोग की रपट कानूनी नजरिए से बेमानी और अप्रासांगिक है।

हां, राजनीतिक नजरिए से इसका महत्व अभी शायद शेष है। आयोग ने बाबरी ढांचे के विध्वंस को सुनियोजित कहा है तो इससे पहली नजर में भाजपा सहित संघ परिवार का यह दावा खंडित होता है कि वह एक स्वत:स्फूर्त वारदात थी। आम सोच के विपरीत यदि आयोग ने अटलबिहारी वाजपेयी को भी परोक्षत: दोषी माना है और उनके खिलाफ कड़े निंदात्मक शब्द प्रयाग किए हैं तो इसका निहितार्थ भी स्पष्ट है। इसका अर्थ हुआ कि भाजपा एवं संघ परिवार के सारे नेता किसी न किसी तरह बाबरी विध्वंस के दोषी हैं। विरोधियों के लिए भाजपा पर हमला करने का यह बहुत बड़ा हथियार हो सकता है। किंतु देश के नजरिए से लिब्राहन का यह पहलू दुर्भाग्यपूर्ण ही माना जाएगा। चाहे बाबरी विध्वंस के लिए आप जितने नेताओं

लिब्राहन आयोग की जांच रिपोर्ट का विश्लेषण

आयोग का गठन निम्नलिखित विचारार्थ विषयों की जांच करने के लिए किया गया था:

1. 6 दिसंबर 1992 को अयोध्या में राम जन्मभूमि बाबरी मस्जिद परिसर में घटी घटनाओं से संबंधित सभी तथ्यों तथा परिस्थितियों से जुड़ी सभी घटना अनुक्रम, जिनके कारण राम जन्मभूमि-बाबरी ढांचे का विध्वंस हुआ।
2. उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री, मंत्रिपरिषद् के सदस्यों, उत्तर प्रदेश सरकार के अधिकारियों, संबंधित संगठनों और एजेंसियों की राम जन्मभूमि-बाबरी मस्जिद ढांचे के विध्वंस या उससे संबंधित घटनाओं में अदा की गई भूमिका।
3. उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा सुरक्षा उपायों और अन्य व्यवस्थाओं के बारे में खामियां, जिनका निर्धारण किया गया था अथवा जिन्हें कार्यरत किया गया, जिनके कारण 6 दिसंबर 1992 को अयोध्या नगर और फैजाबाद में राम जन्मभूमि - बाबरी मस्जिद परिसर में ऐसी घटनाएं घटने में सहयोग मिला।
4. 6 दिसंबर 1992 को अयोध्या में मीडिया कर्मियों पर प्रहार से संबंधित सभी तथ्यों तथा परिस्थतियों से जुड़ी सभी घटनाओं का अनुक्रम।
5. कोई भी अन्य विषय जिनका संबंध जांच के विषय से जुड़ा हो।

प्रारंभिक टिप्पणी

आयोग ने सतरह वर्षों की दीर्घावधि के बाद अपनी अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की है। आयोग की इस रिपोर्ट पर देश को सहस्त्रों करोड़ रूपए की कीमत चुकानी पड़ी है। यह लोगों की आशाओं पर खरी नहीं उतर पाई है। इस रिपोर्ट से वे तथ्य सामने नहीं आ पाए हैं जिसके लिए आयोग का गठन किया गया था। ऐसा लगता है कि यह रिपोर्ट पूर्वाग्रह मस्तिष्क से दी गई है जिसमें किसी खास व्यक्ति और/या संस्था पर रिपोर्ट देने का मन बना लिया गया था। लगता है कि आयोग ने पहले से ही तय कर लिया था कि कुछ व्यक्तियों और संगठनों को रिपोर्ट में दोषी ठहराया

को दोषी करार दीजिए, उनकी निंदा करिए, अयोध्या विवाद को आप स्थायी रूप से नेपथ्य में नहीं धकेल सकते हैं। वैसे भी देश बाबरी विध्वंस से काफी आगे निकल चुका है। नेताओं को यह ध्यान रखना चाहिए कि फिर से देश को बाबरी विध्वंस के दौर में ले जाने का परिणाम काफी घातक होगा। बाबरी विध्वंस देश के लिए दु:खद दिन अवश्य था, किंतु यह सुनियोजित था या अचानक हुआ, इस पर हमेशा से दो राय रही हैं। मुकदमें का दायित्व न्यायालय पर छोड़कर राजनीति का प्रतिष्ठान को अयोध्या विवाद के समाधान की ईमानदार कोशिश करनी चाहिए, देशहित में यही है। ■

विशेष

उभरते प्रश्न

रामलाल

- ताला किसका खुला? शिलान्यास किसका हुआ? मंदिर या मस्जिद का? शिलान्यास मंदिर का किया गया तो, मंदिर निर्माण में संकोच (शर्म) क्यों?
- 6 दिसम्बर सायं के पश्चात प्रदेश व केन्द्र में किसका शासन था?
- सभी तथ्यों से मन्दिर होने का प्रमाण फिर भी 50 वर्षों से शासन निर्णय करने की हिम्मत क्यों नहीं कर रहा? यदि यह विषय बेहद संवेदनशील है तो प्रयत्नों में संवेदनशीलता क्यों नहीं? 2004 से अब तक इस दिशा में कोई प्रयास क्यों नहीं?
- कोर्ट जमीन के विवाद का तो निर्णय कर सकती है किन्तु राम जन्म स्थान है या नहीं यह भावना व आस्था का विषय जिसका निर्णय कोर्ट नहीं कर सकती है। आस्था 2-4 महीने में नहीं बनती। यह हजारों वर्ष की मान्यता पर आधारित है। सरकार अपनी बला कोर्ट पर टाल रही है। कोर्ट उसकी बला अपने सिर पर लेना नहीं चाह रही। इसीलिए 60 वर्ष में कोई निर्णय नहीं।
- दुनिया में भारत ही ऐसा देश है जहां इतने लम्बे समय तक बहुसंख्यक समाज की भावनाओं की अनदेखी हो रही है। 'सहिष्णु' की इतनी परीक्षा उचित है क्या?
- समस्या समाधान में इसी तरह जानबूझकर विलम्ब शासन ने किया तो पुन: जन-आन्दोलन के ज्वार को रोकना सम्भव होगा क्या? कोई यह न समझे कि आंदोलन समाप्त हो गया है। राम मंदिर का जज्बा लोगों के हृदय में अभी भी उसी तरह विद्यमान है। युवाओं में भी आज रामभक्ति व राष्ट्रभक्ति का जज्बा सबसे ऊपर है।

(श्री रामलाल भाजपा के राष्ट्रीय महामंत्री (संगठन) हैं)

जाना है और अन्य लोगों को क्लीन चिट दी जानी है। इस प्रक्रिया में आयोग ने घटना क्रम के पीछे सत्य का उद्घाटन करने की बजाए स्वयं को ही कहीं अधिक उद्घाटित कर दिया है। रिपोर्ट में अनेक प्रकार के विरोधाभास और असंगतियों से भरे छेद दिखाई पड़ते हैं।

यह बात विशेष रूप से ध्यान देने की है कि आयोग शायद ही कभी उस स्थल पर गया हो जहां तथाकथित घटना घटी। विचित्र बात है कि रिपोर्ट में घटना स्थल पर न जाना खलता है और तथ्य यही है कि उसे कार्यालय में बैठ कर ही लिखा गया। उल्लेखनीय है कि भारत सरकार ने घोषणा की थी कि आयोग का कार्यालय लखनऊ में होगा, परंतु आयोग का काम काज कभी भी लखनऊ में न होकर दिल्ली में ही हुआ।

आयोग ने विचारार्थ विषयों का अतिलंघन किया:

पृष्ट 942 पर अध्याय 14 (निष्कर्ष) के पैराग्राफ सं. 166.8 में कहा है... ....'' बारबार कही गई और बार-बार इंकार की गई टिप्पणियां हैं जो गोविन्दाचार्य के नाम है.....

> **टिप्पणी:** ***यह एक पूर्णत: विचारार्थ विषयों से हटकर गुमराह और असंगतबद्ध हैं। ये तथाकथित टिप्पणियां (और इनसे इंकार भी किया गया है) दिसंबर 1992 के बहुत बाद की हैं।***

पृष्ठ सं. 958, पैरा सं. 171 में आयोग ने अन्य व्यक्तियों अर्थात् देवरिया बाबा, अटल बिहारी वाजपेयी, बद्री प्रसाद तोशनीवाल, मोरपंत पिंगले, ओंकार भावे, प्रो. राजेन्द्र सिंह, गुर्जन सिंह, जी.एम. लोढा, चम्पत राय के साथ -साथ दोषियों की सूची दी है।

> **टिप्पणी:** ***परंतु आयोग ने कभी भी इन लोगों को अपना बचाव करने के लिए नहीं बुलाया। यदि किसी व्यक्ति के खिलाफ कोई साक्ष्य या प्रमाण होता है तो आयोग पर कानूनी और नैतिक बाध्यता रहती है कि वह अपना केस प्रस्तुत करे और अपना बचाव करे। हाई कोर्ट का जज होने के नाते यह बात उन्हें मालूम होनी चाहिए थी कि विधि शास्त्र के अंतर्गत न्याय की यह प्राथमिक आवश्यकता होती है और किसी को तब तक दोषी नहीं ठहराया जा सकता जब तक उसे निर्दोष साबित करने का अवसर न दिया जाए।***

इस सचूी में आयोग ने श्री प्रवीण तोगड़िया का नाम भी दिया है। 6 दिसंबर को या उससे पहले भी तोगड़िया की गतिविधियों का दायरा केवल गुजरात तक सीमित था। अत: न तो वह उस दिन मंच पर थे और न ही वे वक्ता थे।

पृष्ठ 931, पैरा 162.2 में आयोग ने कहा है: ''ऐसी कोई आवश्यकता नहीं है कि मीडिया पूर्वाग्रहरहित हो या स्वतंत्र हो अथवा वह किसी का पक्ष न ले।''

> **टिप्पणी:** ***क्या कहीं भी विश्व में किसी प्रकार की सरकार ने आज तक यह कहा है कि मीडिया को स्वतंत्र, निष्पक्ष न्याय संगत और सोद्देश्य नहीं होना चाहिए? आयोग की उक्त टिप्पणी ने इस ''चौथे साम्राज्य'' को यह बढ़ावा देने का प्रयास किया है कि यह चौथा साम्राज्य अनैतिक, गैर जिम्मेदार बने और ईमानदार न रहे। ''***

पृष्ठ 935, पैरा सं. 163.2 में आयोग ने कहा है ''उदाहरण के लिए, उत्तर प्रदेश की हाई कोर्ट के दुराग्रही रवैये, राज्यपाल के कड़े दृष्टिकोण, सुप्रीम कोर्ट के प्रेक्षक की विवेकहीनता और गैर जिम्मेदारी और सुप्रीम कोर्ट की अल्पदृष्टि स्वयं में विचित्र और दुविधापूर्ण कथन हैं, अत: उनकी गहराई में मुझे नहीं जाना है।''

> **टिप्पणी:** ***हाई कोर्ट का एक जज जो आयोग का चेयरमैन है, उसके द्वारा इस प्रकार की बेहद गैर जिम्मेदाराना टिप्पणी अवांछनीय है। ऐसी अवांछनीय टिप्पणी तो सुप्रीम कोर्ट की अवमानना के समान है। मजे की बात यह भी है कि आयोग ने तत्कालीन उत्तर प्रदेश के राज्यपाल को बुलाया तक नहीं। फिर भी उसने राज्यपाल के खिलाफ ऐसी अपमानजनक टिप्पणी की। अयोग यह बात भी समझ नहीं पाया कि वह एक हाई कोर्ट के जज रहे हैं। और हाई कोर्ट के एक जज को सुप्रीम कोर्ट पर ऐसी टिप्पणी करने का कोई अधिकार नहीं है - सुप्रीम कोर्ट सबसे ऊपर होती है।***

षड्यंत्र

पृष्ठ 917, पैरा 158.9 पर आयोग ने कहा है- ''.... साक्ष्यों के पूर्वानुमान से यही निष्कर्ष निकलता है कि कार सेवकों का इकट्ठा होना और अयोध्या तथा फैजाबाद में उनकी भीड़ न तो अचानक हुई और न ही स्वैच्छिक थी। यह भलीभांति आयोजित और सुनियोजित थी...''

परंतु **अध्याय 1 पृष्ठ सं. 15, पैरा 7.4** में आयोग ने कहा है –''किसी भी (मुस्लिम संगठनों के) काउंसिलों ने आयोग को षड्यंत्र या पूर्व-आयोजन अथवा संयुक्त रूप से मिलकर काम करने वाला कोई साक्ष्य या सूचना पेश नहीं की।

इसी अध्याय के पैरा 7.5 में आयोग ने आगे कहा है....''एक समुदाय या अन्य मुस्लिमों की ओर से कोई प्रभावी भागीदारी नहीं थी। आयोग के समक्ष मुस्लिमों की ओर से किसी वैकल्पिक 'थ्योरी' या कोई अन्य 'वर्जन' पेश नहीं किया गया.....''

इसी पैरा 7.5 में कहा है...'' एक खास समुदाय के नेता माने जाने वाले किसी जिम्मेदार शिक्षित नागरिक अथवा ऐसे लोगों ने जिन्होंने ढांचा ध्वस्त होने से पूर्व बातचीत में भाग लिया, किसी प्रकार की सामग्री अथवा तथ्यों को आयोग के सामने पेश नहीं किया।

अध्याय 10 के पृष्ठ 775, पैरा 130.5 में आयोग ने कहा है''....इस प्रकार के षड्यंत्र में कोई दस्तावेज अथवा प्रत्यक्ष साक्ष्य संभव नहीं है और न ही ध्वस्त होने की किसी योजना का बेदाग और पक्का साक्ष्य संभव है।''

पृष्ठ 782, पैरा 130.24 पर आयोग ने कहा है ...''गृह मंत्री गोडबोले ने कहा है कि योजना संबंधी कोई सूचना नहीं है और इसलिए यह मतलब नहीं निकाला जा सकता कि ढांचा ध्वस्त करने के लिए कांग्रेस या भाजपा का षड्यंत्र था....''

टिप्पणी: ***तब, आयोग किसी आधार, साक्ष्य ओर किस औचित्य पर इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि यह भली-भांति आयोजित और सुनिश्चित था। साथ ही साथ, इस तथ्य पर ध्यान देने की आवश्यकता है कि 6 दिसंबंर 1992 को तथाकथित ढांचे के ध्वस्त होने के बाद आरएसएस, वीएचपी और बजरंग दल नामक तीन संगठनों का विधिविरूद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम 1967 के अंतर्गत 10 दिसंबर 1992 को प्रतिबंध लगा दिया गया था। इस अधिनियम के अनुसार दिल्ली हाई कोर्ट के वर्तमान जज जस्टिस पी.के.बाहरी की अध्यक्षता में 30 दिसंबर 1992 को एक ट्राइब्यूनल (अधिकरण) का गठन किया गया था। एक संवैधानिक निकाय होने के कारण यथावत विचारण के बाद इस अधिकरण ने 18 जून 1993 को अपना निर्णय दिया जिसे सरकारी राजपत्र (भारत राजपत्र असाधारण, भाग-II, खंड 3, उपखंड -II) में प्रकाशित किया गया।***

इस राजपत्र के **पृष्ठ 71** पर अधिकरण का निर्णय था :: यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि पीडबल्यू-7 ने साफ तौर स्वीकार किया है कि ऐसा कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य नहीं है जिससे पता चले कि इन संगठनों ने विवादित ढांचे को ध्वस्त करने के लिए कोई पूर्व योजना तैयार की थी। फिर पी.डबल्यू-7 ने स्वीकार भी किया कि 6 दिसंबर 1992 के दिन हुई घटना की वीडियो रिकार्डिंग आई बी ने तैयार की थी...''

जस्टिस बाहरी के इसी निर्णय के पृष्ठ 72 पर कहा गया है...''यहां तक कि स्वयं केंद्र सरकार ने जो श्वेत पत्र तैयार किया, उसमें भी इन संगठनों या उनके कार्यकर्ताओं द्वारा विवादित ढांचे को ध्वस्त करने की पूर्व योजना की थ्योरी का समर्थन नहीं होता है.....''

यहां यह उल्लेखनीय है कि पी.डबल्यू-7 श्री पाधी था, जो आई बी का एक बड़ा वरिष्ठ अधिकारी था, और उसे भारत सरकार ने बाहरी ट्राइब्युनल के समक्ष अपना केस प्रस्तुत करने के लिए भारत सरकार ने अधिकृत किया था।

उपर्युक्त तथ्यों से यह बात साफ तौर पर सिद्ध हो जाती है कि आयोग का मन पूर्वाग्रही था और उसने पहले ही विचार बना कर इस रिपोर्ट को लिखा है। जस्टिस बाहरी दिल्ली हाई कोर्ट के वर्तमान जज थे और जिस ट्राइब्युनल के वह अध्यक्ष बने थे, वह न्यायिक निकाय था, जिसका निर्णय मानना सरकार के लिए बाध्यकारी होता है। दूसरी तरफ लिब्राहन आयोग की रिपोर्ट सरकार के लिए कानूनी रूप से बाध्यकारी नहीं है और यह केवल सिफारिशी प्रकार की है जिसे सरकार माने या न माने।

लगता है कि आयोग उसी रुग्णता से ग्रसित है जिसका उल्लेख अध्याय 1 (प्रस्तावना) **पैरा 1.1 में पृष्ठ 1** पर हुआ है....'' कुछ लोगों के लिए शक्ति प्राप्त करने को लालच सिर चढ़ कर बोलता है। शक्ति अर्जन का सामान्य साधन राजनीति के रास्ते से आता है। स्वार्थ साधने और शक्ति अर्जन के लिए राजनीति के प्रयोग की इच्छा और तलाश हमेशा रहती है – राजनीतिक वांछनीय परिणाम के लिए चाहे जैसे भी हो, कुछ भी किया जा सकता है। शक्ति अर्जन की प्रक्रिया में किसी इंस्टीट्यूशन, राष्ट्र, व्यक्ति या समग्र रूप से समाज पर क्या प्रभाव पड़ेगा, इसकी चिंता नहीं रहती है। जीवन स्वयंमेव राजनीति का शिकार हो जाता है उद्देश्य अथवा बौद्धिक ईमानदारी या लॉजिक सब कुछ इस प्रक्रिया में गुम हो जाते हैं....''

टिप्पणी: ***वस्तुत: आयोग के शब्द ही स्वयं उस पर पूरी तरह से लागू होते हैं। सरकार के आदेशों तथा इच्छाओं के बावजूद भी आयोग ने कभी***

भी लखनऊ से अपना कामकाज नहीं किया। वह दिल्ली में शक्ति अर्जन की राजनीति और अपना प्रयोजन सिद्ध करने के उद्देश्य की इच्छा और तलाश करने की चाह में बैठा रहा।''

राम जन्मभूमि का समर्थन

दुर्घटनावश अथवा इरादे रखकर, लगता है कि आयोग ने कुछ असावधानी बरतते हुए ऐसी टिप्पणियां कर दी हैं जिनका न तो खंडन किया जा सकता है और न ही प्रतिवाद किया जा सकता है। आयोग ने अंत में आकर रामज्न्मभूमि केस का समर्थन ही किया है:

अध्याय 2 में (अयोध्या और इसका भूगोल) पृष्ठ 23, पैरा 9.1 में रिपोर्ट में कहा है: ''हिंदू परंपराओं में अयोध्या को हिंदू लोग भगवान राम को जन्म स्थान मानते हैं और इसलिए इसे पावन और ऐतिहासिक नगर माना जाता है।''

पैरा 9.2

''प्राचीन अयोध्या पारंपरिक रूप से हिंदू जीवन, संस्कृति का निष्कर्ष तथा बहुधर्मी समाज के सह-अस्तित्व का रूपांतरण माना जाता है। यह शांतिप्रिय स्थल था जहां नियमित रूप से लोगों, तीर्थयात्रियों, साधुओं और संतों, मुनियों, यात्रियों, पर्यटकों का जमघट रहता है।''

पैरा 9.3

''अयोध्या विशाला, खोसला या महाकौशल, इक्ष्वाकु, रामपुरी, राम जन्मभूमि को नाम से भी बहुत प्रसिद्ध रही।''

पैरा 9.4

''रामभक्तों या जिन्हें हिंदू धर्म में रामानंदियों का नाम दिया जाता है, उनके लिए अयोध्या का विशेष ओर विशिष्ट महत्व है। यह स्थान हिंदुओं, मुनियों, यात्रियों, तीर्थयात्रियों, साधुओं और संतों के लिए, चाहे उनका कोई भी धर्म हो, किसी धर्म में आस्था हो, अपूर्व तीर्थस्थल रहा है।''

पैरा 9.5

''यह स्थल राम की जन्मभूमि के कारण भावात्मक मुद्दा बन गया है क्योंकि राम की गाथा में संस्कृति का हर पहलू विराजमान है, जो विगत को वर्तमान तथा भविष्य से जोड़ता है। कितने ही शासकों के बाद भी शताब्दियों से इस नगर में धार्मिक भावप्रणता का संचार बना रहा है।''

पृष्ठ 25, पैरा 10.3

''अयोध्या के पूर्व में फैजाबाद है जहां कि जनसंख्या लगभग 2,10,000 है।

यहां बहुत से मंदिर हैं जो अधिकांशत: हिंदू देवता विष्णु के प्रति समर्पित हैं।''

पृष्ठ 26, पैरा 10.10

''वर्तमान में इस नगर में बहुधर्मावलंबियों का निवास है जिसमे मुस्लिम, बौद्ध, सिख, ईसाई, जैन आदि बसते हैं परंतु हिंदुओं की संख्या काफी अधिक है। सभी मंदिरों के द्वार सभी जातियों के लोगों के लिए खुले रहते हैं।

पृष्ठ 29 पैरा 12.1

''यहां एक बड़े क्षेत्र में अनेकों मन्दिर, मस्जिद, तीर्थ स्थल, गुम्बद, उद्यान और अन्य धार्मिक स्मारक फैले हुए हैं, बल्कि आलंकारिक रूप से कहा जाए तो कह सकते हैं कि अयोध्या का हर घर एक मन्दिर होता है।

पृष्ठ 29, पैरा 12.2

''यहां प्रमुख मंदिरों में संकट मोचन मंदिर, शक्ति गोपाल मंदिर, शेषावतार मंदिर, वेद मंदिर, मणिराम की छावनी, हनुमान गढ़ी, प्रीति के ठाकुर, कनक भवन, रंग महल, आनंद भवन और कौशल्या भवन.... शामिल हैं।''

पृष्ठ 32, पैरा 12.12

''राम कथा कुंज, अयोध्या शहर या राम जन्मभूमि परिसर या रामकथा कुंज या विवादित ढांचे की स्थलाकृति या तथ्यों पर कोई विवाद नहीं है। एन.सी. पाधी ने इन तथ्यों को अपने स्टेटमेंट में बिना किसी विसंगति के परिपुष्ट किया है।''

अध्याय 4 (घटनाक्रम)

पृष्ठ 61, पैरा 18.6''

''1528 में मुगल बादशाह बाबर ने कमांडर मीर बाकी को अयोध्या में मस्जिद निर्माण का आदेश दिया। वर्तमान आंदोलन के प्रचारकों का दावा है कि राम जन्मभूमि मंदिर को ध्वस्त करने के बाद मीर बाकी ने मस्जिद अर्थात् 'विवादित ढांचे' का निर्माण किया।''

पृष्ठ 61, पैरा 18.8

''सामान्यत: हिंदू भक्तों द्वारा राम चबूतरा पर स्थापित मूर्तियों की पूजा काफी समय से की जाती रही है। 1949 में विवादित ढांचे में मूर्तियों के स्थानांतरण से पूर्व मुस्लिमों ने, जिसका 'प्रतिदावा' किया जा रहा है, कोई आपत्ति नहीं की थी।

पृष्ठ 62, पैरा 18.9

''किंतु इतिहास में इस प्रश्न के बारे में आयोग ने जांच नहीं की है कि मस्जिद ठीक किस स्थान पर बनी थी और न इस पर बातचीत हुई कि वह मंदिर के स्थान

पर निर्मित हुई थी, क्योंकि यह आयोग के दायरे के बाहर की बात है।

टिप्पणी: ***इतना कहना पर्याप्त है कि मीर बाकी ने मस्जिद का निर्माण 1528 में कराया, जो अब एक स्वीकार्य तथ्य बन चुका है।***

पृष्ठ 63, पैरा 18.13

''हालांकि किसी न्यायपालिका या प्रशासन द्वारा विवादित ढांचे पर जाने या वहां नमाज पढ़ने पर मुस्लिमों पर कोई प्रतिबंध लगाने का कोई आदेश नहीं रहा है, फिर भी 1934 से विवादित ढांचे पर नमाज नहीं पढ़ी जाती थी। विवादित ढांचे के अंदर न तो कोई जुलूस निकाला गया और न ही वहां कोई कब्र खोदी गई।''

टिप्पणी: ***इससे स्पष्ट हो जाता है कि आयोग ने अप्रत्यक्ष रूप से पुष्टि कर दी है कि मस्जिद का निर्माण मंदिर के स्थल पर हुआ। अयोध्या का अस्तित्व तो चिरंतर काल से बना हुआ है जबकि बाबर तो बहुत बाद में आया था और मस्जिद का निर्माण 1528 ईस्वी में हुआ।***

पृष्ठ 88, पैरा 26.2

''यह उल्लेखनीय है कि अयोध्या से कोई मुस्लिम समुदाय का सदस्य बाबरी मस्जिद एक्शन कमेटी या किसी अन्य कमेटी का सदस्य नहीं था, जिसने कभी भी विवादित ढांचे के ताले खुलवाने का विरोध नहीं किया। हैदराबाद के एक सांसद सुलतान शहाबुद्दीन ओवेसी ने कुछ अन्य लोगों के साथ ताले खोलने को चुनौती दी थी – वे ही पहली बार हिंदू संगठनों के विरोधी बने।''

पृष्ठ 89, पैरा 26.4 में कहा है

''मुस्लिमों ने पहली जनवरी से 30 मार्च 1987 तक विभिन्न प्रकार से अपना विरोध प्रदर्शन किया। गणराज्य दिवस का बायकाट करने (जिसे बाद में वापस ले लिया गया) का आह्वान करने के अलावा बंद का आह्वान किया गया और दिल्ली में वोट क्लब पर सार्वजनिक रैली निकाली गई। जामा मस्जिद के शाही इमाम और सुलेमान सेठ आदि जैसी कुछ हस्तियों ने सार्वजनिक रूप से हिंसा की धमकियां दी।''

टिप्पणी: ***फिर भी आयोग किसी व्यक्ति पर विपरीत टिप्पणी नहीं कर पाया है।***

आयोग ने स्वयं अपना खंडन किया

पैरा 158.3 में आयोग ने कहा है...'' यह कभी आंदोलन नहीं बन सका...''

जबकि **पैरा 158.9 और 159.10** में आयोग ने खुद ही अपनी बात का ''. ...आंदोलन की संपूर्ण प्रक्रिया'' और ''.... आंदोलन के नेताओं ...'' जैसी बातें कह कर खुद ही अपनी बात का खंडन किया है।

पृष्ठ 15, पैरा 7.3

''अपने घटकों की ओर से मुस्लिम समुदाय के प्रमुख सदस्यों ने दावा किया है कि ढांचे के ध्वस्त होने से उनकी भावनाओं और संवेदनाओं पर बुरा असर पड़ा है। उनका कहना है कि उनकी धार्मिक भावनाओं को कष्ट पहुंचा है। प्रारंभ में बाबरी मस्जिद एक्शन कमेटी, वक्फ बोर्ड, अन्य मुस्लिम संगठनों और व्यक्तियों की विभिन्न परिषदों (वकील आयोग के सामने पेश हुए और आयोग को नियम बनाने में सहयोग किया।

पृष्ठ 15, पैरा 7.4

''इसके बाद, आखिरी चरणों में अर्थात् लगभग एक दशक के बाद मुस्लिम बोर्ड के कौंसिलों ने कार्यवाही में भाग लिया। आयोग बनने के पांच वर्ष बाद मुश्ताक अहमद आयोग के सामने आने लगे, वे आयोग के सामने मुस्लिम लॉ बोर्ड में शामिल और एसोसिएट करने से पहले की बात है। आजाद मखमल ने शहाबुद्दीन का प्रतिनिधि बनकर जांच में कोई खास योगदान नहीं किया। किंतु मुश्ताक अहमद ने जरूर बीच बीच में कुछ गवाहों का क्रास-एक्जामिन किया। आयोग की जांच के एक दशक बाद कोई एक साहब बहाद-उल-बाकी' ने एआईएमएल का प्रतिनिधि बन कर पेश हुए, उनके साथ वरिष्ठ कौंसिल युसुफ मुच्छला ने मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड का प्रतिनिधित्व किया और कुछ प्रमुख गवाहों का क्रास-एक्जामिन किया जिसमें आंशिक रूप से एल.के. मडजानी शामिल हैं। किसी भी कौंसिल ने आयोग को षड्यंत्र या पूर्व योजना या संयुक्त रूप से काम करने के बारे में कोई साक्ष्य या सूचना नहीं दी। जांच के आखिर में एक एडवोकेट ओ.पी. शर्मा भी उतने ही बेकार दिखाई पड़े।''

पृष्ठ 17, पैरा 8.3 में आयोग ने कहा है:

''विवादित ढांचे का विवाद उतना ही पुराना है जितना इतिहास। अनगिनत पुस्तकों के लेख और शोध पत्र, आयोग की कार्यवाही या आयोग के रिकार्ड में रखे गए। संपत्ति के हक का निपटारा कोई भी सिविल अदालत कभी नहीं कर पाई, जो अब भी माननीय हाईकोर्ट में पैंडिंग है। समय-समय पर उस समय के शासक ने लोगों को अपने मजहब के अनुसार उपासना की इजाजत देते रहे।''

ढांचे के इर्द-गिर्द 2.77 एकड़ भूमि के अधिग्रहण की गाथा

अक्टूबर 1991 को लोकहित में उत्तर प्रदेश सरकार ने 2.77 एकड़ भूमि का अधिग्रहण किया। एक स्थानीय मुस्लिम ने इलाहाबाद हाई कोर्ट की लखनऊ पीठ में इस अधिग्रहण को चुनौती दी। इस केस की सुनवाई पूर्ण पीठ ने की जिसमें माननीय जस्टिस एच.सी.माथुर, माननीय जस्टिस बृजेश कुमार और माननीय जस्टिस एस.एच.ए. रजा थे। 4 नवंबर 1992 तक दलीलें खत्म हो गई। 4 दिसंबंर 1992 का दिन फैसला सुनाने के लिए रखा गया। जस्टिस माथुर और जस्टिस बृजेश कुमार पहले ही अधिग्रहण आदेश पर अपनी सम्मति लिख चुके थे। परंतु जस्टिस रजा ने 11 दिसंबर 1992 को फैसला घोषित करने में देरी की, जो 6 दिसंबर के बाद पड़ती थीं और यह कार सेवा प्रारंभ होने की निर्धारित तारीख के बाद की थी।

फैसला सुनाने में जानबूझकर की गई देरी के कारण न्यायिक मामले में लोगों के मन में निराशा की भावना जगी और अंततः इस कारण से यह घटना हुई। कारसेवकों का धैर्य टूट गया और वे विवादित ढांचे पर चढ़ गए। ढांचा ध्वस्त करने में पांच घंटों का समय लगा और विवादित ढांचे के खंडहर पर अस्थायी छतरी का निर्माण हुआ, जहां पूजा चल रही है।

सिविल मुकदमे के बारे में दो शब्द

राम जन्म भूमि के नाम के बारे में पहला मुकदमा 1950 में दायर हुआ (जिसकी वर्तमान सं. ओ.ओ.एस सं.-1/1989), दूसरा मुकदमा 1959 में दायर हुआ (जिसकी वर्तमान ओ.ओ.एस सं.-3/1989 है)। तीसरा मुकदमा 1961 में दायर हुआ (जिसकी वर्तमान ओ.ओ.एस सं.-4/1989 है)। चौथा मुकदमा 1989 में दायर हुआ (जिसकी वर्तमान ओ.ओ.एस सं.-5/1989 है)। चालीस वर्षों से ये मामले फैजाबाद की जिला अदालतों में पड़े हुए हैं। 40 वर्षों के बाद 1989 में इन मुकदमों को इलाहाबाद हाई कार्ट की लखनऊ पीठ को स्थानांतरित किया गया। तब से अब तक और बीस वर्ष गुजर गए हैं। किसी एक जज अथवा अन्य जजों की आवश्यकता के कारण पीठ का गठन-पुनर्गठन ग्यारह बार हो चुका है और परिणामतः न्याय में देरी ही नहीं हुई, बल्कि सब कुछ पटरी से उतर चुका है और न्याय नहीं मिला।

■

लिब्राहन आयोग के निष्कर्ष

लिब्राहन आयोग की रपट के जो चुनिंदा अंश सार्वजनिक हुए वे यदि वास्तव में इस आयोग के निष्कर्ष का हिस्सा हैं तो इसका सीधा अर्थ है कि अयोध्या ढांचे के ध्वंस की जांच के नाम पर देश का समय भी बर्बाद किया गया और पैसा भी। इस सिलसिले में इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि लिब्राहन आयोग को करीब 50 बार विस्तार देना पड़ा और इसके चलते यह सबसे लंबे कार्यकाल वाला आयोग बन गया। इस आयोग को अपनी रपट तीन माह में देनी थी, लेकिन उसने डेढ़ दशक से अधिक का समय ले लिया। चूंकि अब केंद्र सरकार के लिए लिब्राहन आयोग की रपट संसद में पेश करना आवश्यक हो गया है इसलिए देखना यह है कि वह उसके निष्कर्षों से किस हद तक सहमति जताती है और किस तरह की कारवाई करने का वायदा प्रकट करती है? इसके साथ ही देखना यह भी होगा कि इस रपट के सार्वजनिक हुए अंशों के अलावा लिब्राहन आयोग ने तत्कालीन केंद्रीय सत्ता की भूमिका पर कुछ प्रकाश डाला है या नहीं? इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि तत्कालीन उत्तर प्रदेश सरकार ने अयोध्या ढांचे को बचाने के लिए वह सब कुछ नहीं किया जो उससे अपेक्षित था और जिसका उसने वायदा भी किया था, लेकिन यदि लिब्राहन आयोग इस नतीजे पर पहुंच रहा है कि विवादित ढांचे के ध्वंस के लिए जिम्मेदार परिस्थितियों का निर्माण करने में केंद्र सरकार की कहीं कोई भूमिका नहीं थी तो इस पर विश्वास करना कठिन है।

यह महज दुर्योग नहीं हो सकता कि छह दिसंबर के निकट आते ही किसी न किसी बहाने अयोध्या ढांचे के ध्वंस का मामला सतह पर आ जाता है। पिछले वर्षों में भी ऐसा ही होता रहा है और यह किसी से छिपा नहीं कि किस तरह विवादित आयोगों की रपटों के जरिए चुनावी लाभ लेने की कोशिश की जाती है। कोई आश्चर्य नहीं कि झारखंड विधानसभा के चुनाव देखते हुए लिब्राहन आयोग की रपट के कुछ अंशों को सार्वजनिक होने दिया गया हो। आखिर कौन नहीं जानता कि संप्रग सरकार ने अपने पहले कार्यकाल में गोधरा कांड पर बनर्जी आयोग की रपट के जरिए बिहार में चुनावी लाभ लेने की कोशिश की थी। वस्तुस्थिति जो भी हो, लिब्राहन आयोग का आवश्यकता से अधिक लंबा कार्यकाल और उसके कथित निष्कर्ष जांच आयोगों के प्रति आम जनता के भरोसे को खत्म करने वाले

हैं। अब यह किसी से छिपा नहीं कि विवादास्पद मामलों की जांच आयोगों के हवाले करने के पीछे प्रमुख कारण सच्चाई से मुंह मोड़ना या फिर उस पर पर्दा डालना ही होता है। लिब्राहन आयोग की रपट कुछ भी कह रही हो, जिन परिस्थितियों में अयोध्या का ढांचा ढहाया गया वे यही अधिक बयान कर रही हैं कि यह सब भीड़ के उन्माद के कारण हुआ। यह कोई ऐसा तथ्य नहीं जिससे पक्ष-विपक्ष अनजान हों, लेकिन राजनीतिक लाभ-हानि के फेर में आरोप-प्रत्यारोप का सहारा लिया जा रहा है। किस्म-किस्म के जांच आयोगों ने अभी तक सच को उजागर करने के नाम पर जो कुछ किया है उसे देखते हुए यह आवश्यक हो जाता है कि आयोगों के जरिए जांच करने के सिलसिले पर विराम लगाया जाए।

(सम्पादकीय : दैनिक जागरण)

अयोध्या में कब-कब क्या हुआ?

अयोध्या विवाद भारत के हिंदू और मुस्लिम समुदाय के बीच तनाव का एक प्रमुख मुद्दा रहा है और देश की राजनीति को एक लंबे अरसे से प्रभावित करता रहा है। विश्व हिंदू परिषद अयोध्या में उस विवादास्पद स्थल पर मंदिर बनाना चाहती हैए जहाँ पहले एक मस्जिद थी। जानिए अयोध्या में कैसे घूमा है समय का पहिया पिछली पाँच सदियों में।

विवाद काफ़ी समय से चलता रहा है

1528: अयोध्या में एक ऐसे स्थल पर एक मस्जिद का निर्माण किया गया जिसे कुछ हिंदू अपने आराध्य देवता राम का जन्म स्थान मानते हैं। समझा जाता है कि मुग़ल सम्राट बाबर ने यह मस्जिद बनवाई थी जिस कारण इसे बाबरी मस्जिद के नाम से जाना जाता था।

1853: पहली बार इस स्थल के पास सांप्रदायिक दंगे हुए।

1859: ब्रितानी शासकों ने विवादित स्थल पर बाड़ लगा दी और परिसर के भीतरी हिस्से में मुसलमानों को और बाहरी हिस्से में हिंदुओं को प्रार्थना करने की अनुमति दे दी।

1949: भगवान राम की मूर्तियां मस्जिद में पाई गयीं। कथित रुप से कुछ हिंदूओं ने ये मूर्तियां वहां रखवाई थी। मुसलमानों ने इस पर विरोध व्यक्त किया और दोनों पक्षों ने अदालत में मुकदमा दायर कर दिया। सरकार ने इस स्थल को

विवादित घोषित करके ताला लगा दिया।

1984: कुछ हिंदुओं ने विश्व हिंदू परिषद के नेतृत्व में भगवान राम के जन्म स्थल को 'मुक्त' करने और वहाँ राम मंदिर का निर्माण करने के लिए एक समिति का गठन किया। बाद में इस अभियान का नेतृत्व भारतीय जनता पार्टी के एक प्रमुख नेता लालकृष्ण आडवाणी ने संभाल लिया।

1986: ज़िला मजिस्ट्रेट ने हिंदुओं को प्रार्थना करने के लिए विवादित मस्जिद के दरवाज़े पर से ताला खोलने का आदेश दिया। मुसलमानों ने इसके विरोध में बाबरी मस्जिद संघर्ष समिति का गठन किया।

1989: विश्व हिंदू परिषद ने राम मंदिर निर्माण के लिए अभियान तेज़ किया और विवादित स्थल के नज़दीक राम मंदिर की नलृव रखी।

1990: विश्व हिंदू परिषद के कार्यकर्ताओं ने बाबरी मस्जिद को कुछ नुक़सान पहुँचाया। तत्कालीन प्रधानमंत्री चंद्रशेखर ने वार्ता के ज़रिए विवाद सुलझाने के प्रयास किए मगर अगले वर्ष वार्ताएँ विफल हो गई।

1992: विश्व हिंदू परिषदए शिव सेना और भारतीय जनता पार्टी के कार्यकर्ताओं ने 6 दिसंबर को बाबरी मस्जिद को ध्वस्त कर दिया। इसके परिणामस्वरूप देश भर में हिंदू और मुसलमानों के बीच सांप्रदायिक दंगे भड़क उठे जिसमें 2000 से ज़्यादा लोग मारे गए।

1998: प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में भारतीय जनता पार्टी ने गठबंधन सरकार बनाई।

2001: बाबरी मस्जिद विध्वंस की बरसी पर तनाव बढ़ गया और विश्व हिंदू परिषद ने विवादित स्थल पर राम मंदिर निर्माण करने के अपना संकल्प दोहराया।

जनवरी 2002: अयोध्या विवाद सुलझाने के लिए प्रधानमंत्री वाजपेयी ने अयोध्या समिति का गठन किया। वरिष्ठ अधिकारी शत्रुघ्न सिंह को हिंदू और मुसलमान नेताओं के साथ बातचीत के लिए नियुक्त किया गया।

फ़रवरी 2002: भारतीय जनता पार्टी ने उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव के लिए अपने घोषणापत्र में राम मंदिर निर्माण के मुद्दे को शामिल करने से इनकार कर दिया। विश्व हिंदू परिषद ने 15 मार्च से राम मंदिर निर्माण कार्य शुरु करने की घोषणा कर दी। सैकड़ों हिंदू कार्यकर्ता अयोध्या में इकट्ठा हुए। अयोध्या से लौट रहे हिंदू कार्यकर्ता जिस रेलगाड़ी में यात्रा कर रहे थे उस पर गोधरा में हुए हमले में 58 कार्यकर्ता मारे गए।

अयोध्या में छह दिसंबर को विवादित ढाँचा गिरा दिया गया

13 मार्च, 2002: सर्वोच्च न्यायालय ने अपने फ़ैसले में कहा कि अयोध्या में

यथास्थिति बरक़रार रखी जाएगी और किसी को भी सरकार द्वारा अधिग्रहीत ज़मीन पर शिलापूजन की अनुमति नहीं होगी। केंद्र सरकार ने कहा कि अदालत के फ़ैसले का पालन किया जाएगा।

15 मार्च, 2002: विश्व हिंदू परिषद और केंद्र सरकार के बीच इस बात को लेकर समझौता हुआ कि विहिप के नेता सरकार को मंदिर परिसर से बाहर शिलाएं सौंपेंगे। रामजन्मभूमि न्यास के अध्यक्ष महंत परमहंस रामचंद्र दास और विहिप के कार्यकारी अध्यक्ष अशोक सिंघल के नेतृत्व में लगभग आठ सौ कार्यकर्ताओं ने सरकारी अधिकारी को अखाड़े में शिलाएं सौंपी।

22 जून, 2002: विश्व हिंदू परिषद ने मंदिर निर्माण के लिए विवादित भूमि के हस्तांतरण की माँग उठाई।

जनवरी 2003: रेडियो तरंगों के ज़रिए ये पता लगाने की कोशिश की गई कि क्या विवादित राम जन्मभूमि-बाबरी मस्जिद परिसर के नीचे किसी प्राचीन इमारत के अवशेष दबे हैं, कोई पक्का निष्कर्ष नहीं निकला।

मार्च 2003: केंद्र सरकार ने सुप्रीम कोर्ट से विवादित स्थल पर पूजापाठ की अनुमति देने का अनुरोध किया जिसे ठुकरा दिया गया।

अप्रैल 2003: इलाहाबाद हाइकोर्ट के निर्देश पर पुरातात्विक सर्वेक्षण विभाग ने विवादित स्थल की खुदाई शुरू की, जून महीने तक खुदाई चलने के बाद आई रिपोर्ट में कोई ठोस निष्कर्ष नहीं निकला।

मई 2003: सीबीआई ने 1992 में अयोध्या में बाबरी मस्जिद गिराए जाने के मामले में उपप्रधानमंत्री लालकृष्ण आडवाणी सहित आठ लोगों के ख़िलाफ पूरक आरोपपत्र दाखिल किए।

जून 2003: काँची पीठ के शंकराचार्य जयेंद्र सरस्वती ने मामले को सुलझाने के लिए मध्यस्थता की और उम्मीद जताई कि जुलाई तक अयोध्या मुद्दे का हल निश्चित रूप से निकाल लिया जाएगा, लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ।

अगस्त 2003: भाजपा नेता और उप प्रधानमंत्री ने विहिप के इस अनुरोध को ठुकराया कि राम मंदिर बनाने के लिए विशेष विधेयक लाया जाए।

अप्रैल 2004: आडवाणी ने अयोध्या में अस्थायी राममंदिर में पूजा की और कहा कि मंदिर का निर्माण ज़रूर किया जाएगा।

आडवाणी ने अयोध्या में विवादित स्थल पर पूजा की

जुलाई 2004: शिव सेना प्रमुख बाल ठाकरे ने सुझाव दिया कि अयोध्या में विवादित स्थल पर मंगल पांडे के नाम पर कोई राष्ट्रीय स्मारक बना दिया जाए।

जनवरी 2005: लालकृष्ण आडवाणी को अयोध्या में छह दिसंबर 1992 को

बाबरी मस्जिद के विध्वंस में उनकी कथित भूमिका के मामले में अदालत में तलब किया गया।

जुलाई 2005: पाँच हथियारबंद चरमपंथियों ने विवादित परिसर पर हमला किया जिसमें पाँचों चरमपंथियों सहित छह लोग मारे गए, हमलावर बाहरी सुरक्षा घेरे के नज़दीक ही मार डाले गए।

06 जुलाई 2005 : इलाहाबाद हाई कोर्ट ने बाबरी मस्जिद गिराए जाने के दौरान 'भड़काऊ भाषण' देने के मामले में लालकृष्ण आडवाणी को भी शामिल करने का आदेश दिया। इससे पहले उन्हें बरी कर दिया गया था।

28 जुलाई 2005 : लालकृष्ण आडवाणी 1992 में बाबरी मस्जिद विध्वंस मामले में गुरूवार को रायबरेली की एक अदालत में पेश हुए। अदालत ने लालकृष्ण आडवाणी के ख़िलाफ़ आरोप तय किए।

04 अगस्त 2005: फ़ैजाबाद की अदालत ने अयोध्या के विवादित परिसर के पास हुए हमले में कथित रूप से शामिल चार लोगों को न्यायिक हिरासत में भेजा।

छह दिसंबर, 1992 में बाबरी मस्जिद ढहाए जाने के बाद लिब्राहन आयोग का गठन किया गया

20 अप्रैल 2006 : कांग्रेस के नेतृत्ववाली यूपीए सरकार ने लिब्राहन आयोग के समक्ष लिखित बयान में आरोप लगाया कि बाबरी मस्जिद को ढहाया जाना सुनियोजित षडयंत्र का हिस्सा था और इसमें भाजपा, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ, बजरंग दल और शिव सेना की 'मिलीभगत' थी।

जुलाई 2006 : सरकार ने अयोध्या में विवादित स्थल पर बने अस्थाई राम मंदिर की सुरक्षा के लिए बुलेटप्रूफ़ काँच का घेरा बनाए जाने का प्रस्ताव किया। इस प्रस्ताव का मुस्लिम समुदाय ने विरोध किया और कहा कि यह अदालत के उस आदेश के ख़िलाफ़ है जिसमें यथास्थिति बनाए रखने के निर्देश दिए गए थे।

19 मार्च 2007 : कांग्रेस सांसद राहुल गाँधी ने चुनावी दौरे के बीच कहा कि अगर नेहरू-गाँधी परिवार का कोई सदस्य प्रधानमंत्री होता तो बाबरी मस्जिद न गिरी होती। उनके इस बयान पर तीखी प्रतिक्रिया हुई।

30 जून 2009: बाबरी मस्जिद ढहाए जाने के मामले की जाँच के लिए गठित लिब्राहन आयोग ने 17 वर्षों के बाद अपनी रिपोर्ट प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह को सौंपी।

❐❐